अध्याय 50

याकूब का दफ़नाया जाना और यूसुफ़ के अंतिम वर्ष

उत्पत्ति के वृतांत को समापन की ओर लाते हुए, लेखक संक्षेप में परन्तु स्पष्ट रूप से यूसुफ़ के याकूब के प्रति प्रेम को उजागर करता है। उसने अपने पिता की मृत्यु पर गहरा शोक व्यक्त किया और, प्रतिज्ञा के देश में उसके दफ़नाए जाने की, उसकी इच्छा का सम्मान किया (50:1-14)। पाठ यूसुफ़ के अपने भाइयों के प्रति प्रेम को भी दर्शाता है जैसे उसने उन्हें अपनी क्षमा का आश्वासन दिया (50:15-21)। पुस्तक स्वयं यूसुफ़ के गुज़र जाने के साथ समाप्त होती है। अपनी मृत्यु से पूर्व, उसने कनान देश में अपने दफ़नाए जाने की इच्छा को व्यक्त किया, इस्राएल के पुत्रों के मिस्र से लौटने के पश्चात। यह निवेदन यूसुफ़ के, परमेश्वर की प्रतिज्ञाओं में, बड़े विश्वास को प्रकट करता है (50:22-26)।

याकूब का कनान में दफ़नाया जाना (50:1-14)

[1]तब यूसुफ़ अपने पिता के मुँह पर गिरकर रोया और उसे चूमा। [2]और यूसुफ़ ने न वैद्यों को, जो उसके सेवक थे, आज्ञा दी कि उसके पिता के शव में सुगंध द्रव्य भरें। तब वैद्यों ने इस्राएल के शव में सुगंध द्रव्य भर दिए। [3]और उसके चालीस दिन पूरे हुए, क्योंकि जिनके शव में सुगंध द्रव्य भरे जाते हैं, उनको इतने ही दिन पूरे लगते हैं: और मिस्री लोग उनके लिए सत्तर दिन तक विलाप करते हैं। [4]जब उसके विलाप के दिन बीत गए, तब यूसुफ़ फ़िरौन के घराने के लोगों से कहने लगा, "यदि तुम्हारे अनुग्रह की दृष्टि मुझ पर हो तो मेरी यह विनती फ़िरौन को सुनाओ, [5]मेरे पिता ने यह कहकर, 'देख मैं मरने पर हूँ,' मुझे यह शपथ खिलाई, 'जो कब्र मैंने अपने लिए कनान में खुदवाई है उसी में तू मुझे मिट्टी देगा।' इसलिए अब मुझे वहां जाकर अपने पिता को मिट्टी देने की आज्ञा दे, तत्पश्चात मैं लौट आऊंगा।" [6]तब फ़िरौन ने कहा, "जाकर अपने पिता की खिलाई शपथ के अनुसार उसको मिट्टी दे।" [7]इसलिए यूसुफ़ अपने पिता को मिट्टी देने के लिए चला, और फ़िरौन के सब कर्मचारी अर्थात् उसके भवन के पुरनिये और मिस्र देश के सब पुरनिये उसके संग चले, [8]और यूसुफ़ के घर के सब लोग और उसके भाई और उसके पिता के घर के सब लोग भी संग गए; पर वे अपने बाल बच्चों, और भेड़-

बकरियों, और गाय-बैलों को गोशेन में छोड़ गए। 9और उसके संग रथ और सवार गए, इस प्रकार भीड़ बहुत भारी हो गई। 10जब वे आताद के खलिहान तक, जो यरदन नदी के पार है, पहुंचे, तब वहां अत्यंत भारी विलाप किया; और यूसुफ़ ने अपने पिता के लिए सात दिन का विलाप कराया। 11आताद के खलिहान में के विलाप को देखकर उस देश के निवासी कनानियों ने कहा, "यह तो मिस्रियों का कोई भारी विलाप होगा।" इसी कारण उस स्थान का नाम आबेलमिस्रैम पड़ा, और वह यरदन के पार है। 12इस्राएल के पुत्रों ने ठीक वही काम किया, जिसकी उसने उनको आज्ञा दी थी: 13अर्थात् उन्होंने उसको कनान देश में ले जाकर मकपेला की उस भूमि वाली गुफ़ा में, जो मम्रे के सामने है, मिट्टी दी; जिसको अब्राहम ने हित्ती एप्रोन के हाथ से इसलिए मोल लिया था कि वह कब्रिस्तान के लिए उसकी निज भूमि हो। 14अपने पिता को मिट्टी देकर यूसुफ़ अपने भाइयों और उन सब समेत, जो उसके पिता को मिट्टी देने के लिए संग गए थे, मिस्र लौट आया।

आयत 1. उस पुत्र ने, जिसे लंबे समय तक मृत समझा गया था, अपने भाइयों और पिता से पुनर्मिलन करके ख़ुशी के आंसू बहाए थे (45:1-15; 46:29); परन्तु 50:1 वाला यह संवेदनशील दृश्य पुराने नियम में कहीं और देखने को नहीं मिलता। यह हमें उस विशेष बंधन का स्मरण कराता है जो याकूब और उसके चहेते पुत्र के बीच था, जो अध्याय 37 से लेकर इस कहानी की मुख्य प्रेरक शक्ति है। इस घटना ने परमेश्वर कि उस प्रतिज्ञा को भी पूरा किया कि, यूसुफ़ से पुनर्मिलन करने के लिए कनान से मिस्र की उस विकट यात्रा के दौरान, वह उस वृद्ध कुलपति के साथ होगा, और उसकी ढलती उम्र में यूसुफ़ उसके साथ होगा और मृत्यु के समय उसकी आँखें मून्देगा (46:4)। शोकित **यूसुफ़ अपने पिता के मुँह पर गिरकर रोया और उसे चूमा**।

आयतें 2, 3. यूसुफ़ ने वैद्यों को, जो **उसके सेवक थे, आज्ञा दी कि उसके पिता के शव में सुगंध द्रव्य भरें**, जिसका अर्थ है कि ये वैद्य शरीर को ममीकरण करने के द्वारा दफ़नाने के लिए तैयार करेंगे। मिस्र में सुगंध द्रव्य लगाना अकसर धार्मिक विधि होती थी जिसमें याजकीय मन्त्रों और टोने के सम्मोहन द्वारा अनूबिस और ओसिरिस, मृत्यु के देवताओं, को बुलाया जाता था, जो की प्राचीन मिस्र में प्रमुख थे। परन्तु, यूसुफ़ केवल एक ही परमप्रधान परमेश्वर (אֵל שַׁדַּי, *एल शद्दाए)* की आराधना करता था, जो की अब्राहम (17:1), इसहाक (28:3), और याकूब (48:3) का परमेश्वर था।

मृतक को मृत्यु उपरांत जीवन प्राप्त करने के लिए तैयार करने की प्रक्रिया लम्बी और जटिल होती थी, और इसमें चालीस दिन लगते थे। और यह महँगी भी थी; केवल धनवान और सामर्थशाली मिस्री ही इसे करने में समर्थ थे। क्योंकि यूसुफ़, मिस्र का उच्चाधिकारी होने के नाते, धनवान था और उसे फ़िरौन की दृष्टि में उच्च सम्मान प्राप्त था, वह अपने पिता की सुगंध द्रव्य प्रक्रिया को करने में समर्थ था। परन्तु, यह तथ्य, की उसने केवल "वैद्यों" (רֹפְאִים, *रोफिम;* शाब्दिक

रूप से, "चिकित्सकों") का ही प्रयोग किया, प्रकट करता है की उसने ठेठ मिस्री धार्मिक रीतियों, जो मृत्यु के मिस्री देवताओं से संबंधित हैं, का अनुसरण नहीं किया था।[1]

यूसुफ़ का मुख्य उद्देश्य अपने पिता के शव को, उन शोक के सत्तर दिनों[2] के और दफ़नाने के लिए कनान को लौटने की यात्रा के दौरान, सड़न और गलन से बचाना था। ऐसा करने के लिए, वैद्य शरीर के मुख्य अंगों को निकालने के लिए शरीर की चिर-फाड़ करते थे। वे नाट्रन जैसे खनिज नमक या ऐसे ही अन्य अवशोषकों (सुखाने वाले रसायन) के द्वारा शरीर को संरक्षित रखते थे। अन्य तेल और राल को लगाया जाता था, और खाली देह के रिक्त भाग को मसालों या अन्य वस्तुओं से भरा जाता था, ताकि उसका मौलिक आकार बरक़रार रहे। अंत में, शरीर को बहुत सारे सन के कपड़ों में लपेटा जाता था जो राल में भिगोए हुए होते थे, उसे हानि से बचाने के लिए।[3] इस अध्याय में याकूब आर यूसुफ़ के शरीरों को सुगंध द्रव्य लगाने का उल्लेख (50:2, 3, 26) बाइबल में इस प्रकार से दफ़नाने की प्रथा का एकमात्र उदाहरण है, और यह संकेत देता है पिता और पुत्र दोनों ने ही प्राचीन मिस्र में ऊंचे आदर का आनंद लिया था।

आयत 4. याकूब के **विलाप के दिन** पूरे हो जाने के पश्चात, यूसुफ़ ने राजा के **घराने** के लोगों (राज दरबारियों) से अपने पिता की मृत्यु-शय्या की इच्छा को व्यक्त करने के द्वारा **फ़िरौन** के प्रति उचित सम्मान दिखाया। एक उच्चाधिकारी होने के नाते, सामान्य रूप से मिस्र के राज्य के मामलों को लेकर वह सीधे तौर पर राजा तक पहुँच सकता था। परन्तु, इस शोक के समय के दौरान, शायद वह मैला, बिना दाढ़ी मुंडाए और शोक के वस्त्रों में होगा। किसी को भी फ़िरौन के समक्ष ऐसी विधिवत अशुद्ध दशा में आने की अनुमति नहीं थी (41:14)।[4] इसके अतिरिक्त, वह एक व्यक्तिगत विनती कर रहा था की उसे उसके पिता को दफ़नाने के लिए मिस्र से जाने की अनुमति दी जाए। वह व्यवहार कुशल होना चाहता था और यह निश्चित करना चाहता था की उसके शब्द अधिकार से मांगना ना लगें। इसलिए, उन राज-दरबारियों को नम्रता पूर्वक संबोधित करते हुए शुरुआत की, और कहा, **"यदि तुम्हारे अनुग्रह की दृष्टि मुझ पर हो"** (देखें 18:3; 33:10; 47:29)। फिर उसने उनसे उसके लिए **फ़िरौन से बात करने** का अनुरोध किया।

आयतें 5, 6. यूसुफ़ ने आगे समझाया की उसके पिता ने उसे शपथ खिलाई थी की उसका शरीर उसी कब्र में दफ़नाया जाए जो उसने कनान देश में स्वयं के लिए खुदवाई थी। यूसुफ़ ने बड़ी चतुराई से याकूब की उस मांग का वर्णन टाल दिया उसे **मिस्र में ना दफ़नाया जाए** (47:29); वह नहीं चाहता था की फ़िरौन उसका यह अर्थ निकालकर नाराज़ हो जाए की मिस्री दफ़न-क्रिया में कोई खराबी है।

"खुदवाई" क्रिया כָּרָה *(करह)* से आती, और इस सन्दर्भ में इसका अनुवाद "तराशी/कटवाई" (NRSV; ESV: अंग्रेज़ी "hewed out" [हीउड आउट]) भी किया जा सकता है। हाँ बिलकुल, याकूब ने मकपेला की गुफ़ा नहीं खुदवाई थी,

क्योंकि वह एक प्राकृतिक गुफ़ा थी। कई वर्ष पूर्व, अब्राहम ने सारा की मृत्यु के पश्चात उस गुफ़ा को, आसपास की भूमि समेत, कब्रिस्तान के लिए ख़रीदा था (23:1-20)। परन्तु, ऐसा प्रतीत होता है की इसहाक और याकूब ने अपनी पत्नियों (रिबका और लिआ) और अपने स्वयं की कब्रों के लिए मुख्य गुफ़ा से हटकर विभिन्न दिशाओं में अलग दफन कक्ष खुदवाए थे। इस प्राकृतिक गुफ़ा में दफ़नाने के लिए सीमित स्थान होने के कारण, यूसुफ़ वहां पर दफ़नाया जाने वाला परिवार का अंतिम सदस्य रहा होगा।[5]

याकूब ने अपने पिता को कनान में दफ़नाए जाने के लिए एक ठोस तर्क प्रस्तुत किया। उसकी दलील थी, **"मुझे वहां जाकर अपने पिता को मिट्टी देने की आज्ञा दे, तत्पश्चात मैं लौट आऊंगा।"** क्योंकि उसने दफ़न-क्रिया समाप्त हो जाने पर मिस्र लौट कर आने का गम्भीर संकल्प किया, फ़िरौन निश्चित हो गया था की इसमें कोई छल शामिल नहीं है। उसने उत्तर दिया, **"जाकर अपने पिता की खिलाई शपथ के अनुसार उसको मिट्टी दे।"**

आयत 7. यूसुफ़ के साथ उसके पिता को दफ़नाने के लिए तीन विभिन्न समूह मिस्र से कनान के लिए निकले, सारे वैभव और संस्कार के साथ जो मिस्र जैसा महान देश दे सकता था। उस समूह में शामिल थे (1) **फ़िरौन के सब कर्मचारी** (उच्च श्रेणी के राज-दरबारी), (2) **उसके भवन के पुरनिये** (दरबार के बाहर के सरकारी उच्चाधिकारी), और (3) **मिस्र देश के सब पुरनिये** (सम्पूर्ण देश के उच्च प्रशासनिक अधिकारी)।

आयत 8. इसके अतिरिक्त, **यूसुफ़ के घर के सब लोग** इस यात्रा में शामिल थे। इस गिनती में शायद उसके कुछ दास, और उसके **भाई और उसके पिता के घर के सब लोग शामिल थे**। उसके परिवार के सदस्यों में से **केवल बाल बच्चों को गोशेन में पीछे छोड़ा गया था**, परिवार के **भेड़-बकरियों**, और **गाय-बैलों** समेत।

इन घरानों के सदस्यों के विवरण के विषय की परिकल्पना करना हम पर छोड़ दिया गया है। याकूब और उसके पुत्रों के पास कई चरवाहे और पशु-पालक रहे होंगे जिन्होंने उनके सारे पशुओं की देखभाल की होगी जब दो विभिन्न अवसरों पर वे भाई अनाज खरीदने के लिए मिस्र गए थे (42:3, 43:15)। यह अंदाज़ा लगाना स्वाभाविक होगा की इन सेवकों और इनके परिवारों ने याकूब के परिवार के साथ मिस्र को स्थानांतरण करने का प्रस्ताव आतुरता से स्वीकार कर लिया होगा। न केवल वे, कनान में आए अकाल के कारण, उनको ताक रहे बेरंग भविष्य से बच रहे थे, परन्तु उनको मिस्र के उच्चाधिकारी के पिता और भाइयों के सेवक के रूप में फलने-फूलने का मौका भी मिलने वाला था।

आयत 9. अंततः, फ़िरौन ने इस यात्रा में याकूब के परिवार,[6] राजा के वरिष्ठ गणमान्य व्यक्तियों, और उसके प्रशासनिक अधिकारियों की सुरक्षा के लिए **रथों और सवारों** का रक्षा दल भेजा था। कनान को यात्रा करने वालों की भीड़ बहुत भारी हो गई थी। जॉन टी. विल्लिस ने टिप्पणी की कि ऐसे वृतांत "मिस्री कब्रों पर अंकित चित्रों का स्मरण कराते हैं जो फ़िरौन और उसके राज्य के उच्च अधिकारियों कि विस्तृत अंत्येष्टियों को दर्शाते थे।"[7] याकूब को मिस्रियों द्वारा

इतना सम्मान इसलिए दिया गया क्योंकि वह यूसुफ़, फ़िरौन के द्वितीय, का पिता था।

आयत 10. जैसे उन्होंने पूरब की ओर यात्रा की, उस समूह ने सीनै के उत्तर भाग को पार किया, दक्षिण कनान को जाने वाला मुख्य काफ़िला सड़क पर, और **वे आताद के खलिहान तक, जो यरदन नदी के पार है पहुंचे**। पहचान देने वाले शब्द אָטָד *(आताद)* का साधारणतः अर्थ है "झड़बेरी" या "कांटे" (देखें न्यायियों 9:14, 15; भजन 58:9)।[8] ये विशेष प्रकार की झड़बेरियां इस खलिहान के ठिकाने पर उगती होंगी, परन्तु आज ऐसे किसी स्थान को पहचाना नहीं जा सकता। ("यरदन के पार" वाले वाक्यांश के लिए, 50:11 पर टीका को देखें।)

पाठ बताता है की उस मण्डली ने वहां अत्यंत भारी विलाप किया; और यूसुफ़ ने अपने पिता के लिए **सात दिन का विलाप कराया। यह कथन कुछ तार्किक प्रश्न खड़े करता है**। (1) यह समूह यहाँ एक सप्ताह के विलाप के लिए क्यों रुका होगा, जबकि उनमें से कईयों ने मिस्र में सत्तर दिन का विलाप कर लिया था (50:3)? (2) क्या कुछ लोग विस्तृत विश्राम के बिना इतने थक चुके थे कि आगे बढ़ नहीं सकते थे? (3) क्या उनमें से कुछ लोग कड़ी धूप में मिस्र से कनान की सीमा तक की 160 मील या उससे अधिक दूरी की यात्रा को तय करते-करते निर्जलित हो गए थे? (4) यदि ऐसा था तो, क्या उनको पुनर्जलित होने के लिए एक सप्ताह की आवश्यकता थी, इससे पहले कि वे हेब्रोन पहुंचने के लिए शेष चालीस या पैंतालीस मील की दूरी तय करते? यह स्थान, जहाँ यूसुफ़ और उसका विशाल समूह ठहरा था, एक मरूद्यान रहा होगा जो छाया, पानी, और थके यात्रियों के विश्राम करने लिए मौका प्रदान करता हो।

यूसुफ़ और उसकी मण्डली द्वारा रुकने वाले स्थान के लिए कई ठिकानों का सुझाव दिया गया है, परन्तु तेल अल अज्जुल की सम्भावना सबसे अधिक लगती है।[9] यह एक मिस्री नगर था जो मिस्र से कनान जाने वाले मुख्य समुद्र-तटीय मार्ग पर स्थित था, गाज़ा से करीब चार सौ मील दक्षिण-पश्चिम दिशा कि ओर। यह वह नगर भी था जिसमें मिस्र सैनिक तैनात रखता था मिस्र और मीसुपुतामिया के बीच के इस महत्वपूर्ण मार्ग के पश्चिमी भाग को खुला रखने और दक्षिणी कनान में काफिलों को सुरक्षा प्रदान करने के लिए।

यूसुफ़, उसके परिवार और गैर फौजी गणमान्य व्यक्तियों के साथ दफ़न क्रिया के लिए हेब्रोन जाने के बजाय, कुछ लेखक यह सुझाव देते हैं की, मिस्री सैनिक इस सीमावर्ती नगर में ही रुक गए होंगे, ताकि कनानी लोग अपने देश में विदेशी सैन्य बल के प्रवेश से परेशान न हो जाएं। परन्तु, स्वाभाविक है की यह कोई लड़ाकू सेना नहीं थी, क्योंकि शायद गैर-फौजी सामान्य लोगों की संख्या रक्षक दल से कही अधिक रही होगी।

आयत 11. क्योंकि तेल अल अज्जुल लगभग प्राचीन मिस्र की सीमा पर था, यह स्पष्ट है की उस **देश के निवासी** कनानियों ने इस विशाल समूह के आगमन को देखा होगा और उसके विषय में विचार किया होगा। परन्तु, बहुत शीघ्र ही उन **कनानियों** ने आताद के खलिहान में के **विलाप** को देखा और कहा, **"यह तो**

मिस्रियों का कोई भारी विलाप होगा।" इसके परिणाम स्वरूप इस स्थान **का नाम आबेलमिस्रैम पड़ा**।

आगे आने वाला वर्णन विशेषकर दिलचस्प है क्योंकि यह इब्रानी शब्द אֵבֶל *(एबेल)*, जिसका अर्थ है "विलाप करना," और आबेलमिस्रैम में אָבֵל *(आबेल)*, जिसका अर्थ हो सकता है "मिस्र का [विलाप करने के लिए] चरागाह," का हेरफेर है।[10] एक और नया प्रस्ताव यह है कि आबेल का अर्थ "धारा" या "खाड़ी" है।[11] उस शब्द के ठीक अर्थ के बावजूद, वह स्थान एक ताज़े पानी का ठिकाना लगता है, जहाँ मिस्र से आई एक थकी हुई मण्डली रुकने, विश्राम करने, और विलाप करने के लिए सात दिन बिता सकती थी।

टीकाकारों का 50:10, 11 के सीधे स्पष्ट अर्थ को ठुकराने का कारण है वर्णनकर्ता का कथन कि मिस्रियों द्वारा विलाप करने वाला स्थान य**रदन के पार**[12] था। वे इस वाक्यांश का अनुवाद "यरदन नदी के पूर्व में" के रूप में करते हैं। यह अनुमान होना स्वाभाविक है यदि कोई इस परिकल्पना को स्वीकार करे की उत्पत्ति का लेखक इन घटनाओं का वर्णन इस्राएल के बाद वाले दृष्टिकोण से कर रहा था, जो हो सकता था यरदन के पश्चिम में। यदि यह दृष्टिकोण सही है, तो जब यूसुफ़ और उसकी मण्डली कनान कि दक्षिणी सीमा पर पहुंचे होंगे, वे हेब्रोन के लिए चालीस या पैंतालीस मील उत्तर-पूर्व की यात्रा करने के बजाय, मृत-सागर के दक्षिणी छोर से घूमकर कनान के पूर्व और दक्षिण की ओर से निकले होंगे। वहां से, शायद उन्होंने राजा का महा मार्ग लिया और उत्तर की ओर बढ़े होंगे सागर के उत्तरी छोर को पीछे छोड़ते हुए, जहाँ यरदन नदी उसमें समां जाती है। फिर, इस परिदृश्य के अनुसार, यरदन नदी के पूर्व में कहीं पर, वे "आताद के खलिहान" पहुंचे और सात दिन तक विलाप किया। विलाप के समय के पश्चात, वे पश्चिम की ओर बढ़े और यरदन नदी को पार किया। फिर उन्होंने अपनी यात्रा के सबसे कठिन भाग की शुरुआत की; यह समुद्र तल के 1200 फीट से नीचे से[13] उस बंजर रेगिस्तान से होते हुए, जो सालेम के पास है, कई हज़ार फीट की ऊँचाई तक जाता है (बाद में, यरूशलेम; 14:18; भजन 76:2)। वहां से, उन्हें मुड़कर दक्षिण-पश्चिम की ओर करीब पच्चीस मील की यात्रा करनी थी इस घुमावदार मार्ग को पूरा करके हेब्रोन पहुँचने के लिए, जहाँ वे याकूब के लेप लगे शव को दफ़नाने वाले थे।

यूसुफ़ ने कम से कम 330 मील के इतने लंबे, कठिन और घुमावदार मार्ग को क्यों चुना मिस्र से हेब्रोन पहुँचने के लिए जबकि उसके पास बेहतर विकल्प था? तेल अल अज्जुल से हेब्रोन का अधिक सीधा मार्ग कड़ी धूप में काफी आसान होता और यूसुफ़ की 130 मील यात्रा भी घटा देता। पाठ इस छोटे मार्ग की अनुमति देता है, क्योंकि "यरदन के पार" वाला वाक्यांश काफी उदार सुझाव देता है। इसका संकेत यरदन के पूर्वी ओर या पश्चिमी ओर भी हो सकता है, लेखक के दृष्टिकोण के अनुसार (देखें व्यव. 1:1; 3:20, 25; 11:30)। जब यहोशू की पुस्तक के लेखक ने मूसा और यहोशू की जीत का सार दिया "यरदन के पार," तो पहले उसने भूमि का वर्णन किया यरदन के "पूर्व" में (यहोशू 12:1), और फिर

उसने उसी अभिव्यक्ति का उपयोग "यरदन के पार," उस भूमि का वर्णन करने के लिए जो उन्होंने यरदन के पश्चिमी ओर हासिल की थी (यहोशू 12:7)। इसीलिए, यह कहना एक दिखावटी बहस है की यरदन के पश्चिम में किसी भी स्थान को वह स्थान नहीं समझा जाना चाहिए जहाँ यूसुफ़ और उसके समूह ने सात दिन तक विलाप किया था, केवल इसलिए क्योंकि वर्णनकर्ता उस स्थान का वर्णन "यरदन के पार" के रूप में करता है।[14]

आयतें 12, 13. इस पड़ाव पर, याकूब के पुत्रों का वर्णन में पुनः परिचय दिया गया है, इस बात पर ध्यान दिलाते हुए की उन्होंने **ठीक वही काम किया, जिसकी उसने उनको आज्ञा दी थी** (देखें 25:9; 35:29)। अपनी मृत्यु के समय को निकट आते देख, याकूब ने यूसुफ़ को (47:29-31) और अपने अन्य पुत्रों को आज्ञा दी थी कि वे उसके **शव को कनान देश में ले जाकर मकपेला की उस भूमि वाली गुफ़ा में, जो मम्रे के सामने है**, दफनाएं (देखें 49:29-32)। हां बिलकुल, यह भूमि का वह टुकड़ा था **जिसे अब्राहम ने हित्ती एप्रोन के हाथ से इसलिए मोल लिया था कि वह कब्रिस्तान के लिए उसकी निज भूमि हो** (23:1-20)।

आयत 14. उनके याकूब की आज्ञा को पूरा करने और उसके शव को **दफ़नाने** के पश्चात, **यूसुफ़** ने फ़िरौन से किया **वादा पूरा किया**, **अपने भाइयों और उन सब समेत**, **जो उसके पिता को मिट्टी देने के लिए संग गए थे**, **मिस्र लौट कर**।

यूसुफ़ के अंतिम वर्ष (50:15-26)

यूसुफ़ का अपने भयभीत भाइयों को आश्वासन (50:15-21)

[15]जब यूसुफ़ के भाइयों ने देखा कि हमारा पिता मर गया है, तब कहने लगे, "कदाचित् यूसुफ़ अब हमारे पीछे पड़े, और जितनी बुराई हमने उस से की थी सब का पूरा पलटा हमसे ले।" [16]इसलिए उन्होंने यूसुफ़ के पास यह कहला भेजा, "तेरे पिता ने मरने से पहले हमें यह आज्ञा दी थी, [17]'तुम लोग यूसुफ़ से इस प्रकार कहना, कि हम विनती करते हैं कि तू अपने भाइयों के अपराध और पाप क्षमा कर; हमने तुझसे बुराई की थी, पर अब अपने पिता के परमेश्वर के दासों का अपराध क्षमा कर'।" उनकी ये बातें सुनकर यूसुफ़ रो पड़ा। [18]और उसके भाई आप भी जाकर उसके सामने गिर पड़े, और कहा, "देख, हम तेरे दास हैं।" [19]यूसुफ़ ने उनसे कहा, "मत डरो, क्या मैं परमेश्वर की जगह पर हूँ? [20]यद्यपि तुम लोगों ने मेरे लिए बुराई का विचार किया था; परन्तु परमेश्वर ने उसी बात में भलाई का विचार किया, जिससे वह ऐसा करे, जैसा आज के दिन प्रगट है, कि बहुत से लोगों के प्राण बचे हैं। [21]इसलिए अब मत डरो; मैं तुम्हारा और तुम्हारे बाल बच्चों का पालन-पोषण करता रहूँगा।" इस प्रकार उसने उनको समझा-बुझाकर शांति दी।

आयत 15. याकूब को दफ़नाने की यात्रा के समाप्त होने के पश्चात, **यूसुफ़ के**

भाइयों[15] ने इस तथ्य पर ध्यान दिया की **उनका पिता मर गया है**। अब उन्हें उसकी उपस्थिति की सुरक्षा महसूस नहीं हो रही थी। वास्तव में, वे भयभीत हो गए थे की यूसुफ़ उनके प्रति द्वेष रखेगा और उनसे बदला लेगा, उसको बंधुवाई में बेचने के द्वारा जितनी बुराई उन्होंने उससे की थी सब का पूरा पलटा उनसे लेगा। उनकी बातचीत का ब्यौरा देते हुए, लेखक ने उसी शब्द - "हमारे पीछे पड़े" (שְׂטָם, *सतम)* - का प्रयोग किया जिसका उसने एसाव की याकूब के प्रति घृणा के लिए किया था। उसने अंधे इसहाक को धोखा देकर उसकी मृत्यु शय्या की आशीष उससे चुरा ली थी। इसीलिए, एसाव, जो की पहिलौठा और चहेता था, ने अपने पिता की मृत्यु के पश्चात याकूब की हत्या करने की योजना बनाई थी (27:41)।

आयतें 16, 17. वास्तव में, अध्याय 45 से लेकर 50 तक में यूसुफ़ के कार्य और शब्द उसके भाइयों के साथ उसके मेल-मिलाप करने की इच्छा को दर्शाते हैं। वह दोबारा उन्हें परिवार में शामिल करना चाहता था। परन्तु, यह पहली बार है जब उन्होंने यूसुफ़ के विरुद्ध किए अपराध के लिए उससे क्षमा मांगी (देखें 42:21-23; 44:16)। हालाँकि यूसुफ़ ने ऐसा कुछ भी नहीं किया था जिससे वे सोचें कि वह उनसे बदला लेने की ताक में है, उनका विवेक उन्हें परेशान कर रहा था।

प्रत्यक्ष है, वे भाई **यूसुफ़** का सामना करने में लज्जित और भयभीत महसूस कर रहे थे। अपने पिता के रोकने वाले हाथ के बिना वे अपने शक्तिशाली भाई के समक्ष अपने आपको दुर्बल महसूस कर रहे थे। शायद वे सोच रहे थे की जिन आशीषों का आनंद उन्होंने मिस्र में अपने भाई के कारण उठाया था वे उन्हें, उसके अपने पिता के प्रति प्रेम के कारण मिली थीं, ना कि उनके प्रति उसके भाईचारे के स्नेह के कारण। इसी के साथ, उन्होंने स्मरण किया किस प्रकार उनकी मिस्र की पहली दो यात्राओं के दौरान यूसुफ़ ने उनके साथ चालाकी की थी (अध्याय 42-44), और शायद उन्हें शंका हो रही थी की उन्हें बेचैन करके उसे आनंद आ रहा था। इसीलिए उन्होंने एक मध्यस्थ के द्वारा उसे एक सन्देश भेजने का निर्णय लिया, एक द्वेषपूर्ण आमना-सामना होने को टालते हुए।

सन्देश की शुरुआत **"तेरे पिता,"** शब्दों से हुई और इसने यूसुफ़ को सूचित किया की याकूब ने **मरने से पहले** अपने बेटों को एक आज्ञा दी थी। इस आज्ञा में एक विनती करना शामिल था: **"तुम लोग यूसुफ़ से इस प्रकार कहना, कि हम विनती करते हैं कि तू अपने भाइयों के अपराध और पाप क्षमा कर"** अपने अनुरोध को और दृढ़ करने के लिए, उस सन्देश ने उससे अपने पिता के **परमेश्वर के दासों का अपराध क्षमा करने की विनती को दोहराया**। इससे पूर्व, ये भाई परमेश्वर के दासों की तरह नहीं रहे थे; परन्तु अब उन्हें एहसास हुआ की वे कितने गलत, स्वार्थी और पापमय थे। उन्होंने सच्चाई से अपने भाई से क्षमा याचना की। उनकी अंतिम विनती का आधार रक्त-संबंध नहीं, परन्तु उनकी आत्मिक जड़ें और उनके पिता याकूब के परमेश्वर से उनका साझा संबंध था।

हालाँकि यूसुफ़ के भाइयों ने इस अवसर पर उसकी क्षमा के लिए आग्रह

किया, यह संदेहजनक है की याकूब ने सच में यह सन्देश उनसे कहा था। अंततः, उत्पत्ति की पुस्तक वह वास्तविक समय दर्ज नहीं करती की कब उस कुलपति ने ये निर्देश दिए थे। इसके अतिरिक्त, वृतांत इन भाइयों को कई अवसरों पर छली के रूप में दर्शाता है (34:13; 37:32; 38:11)। इससे भी आगे, यदि याकूब ऐसा कोई सन्देश भेजना चाहता, तो वह सीधे तौर पर यूसुफ़ से बात कर सकता था। यह संभव है कि उन भाइयों ने अपने पिता के निर्देश की मनगढ़ंत कहानी बनाई थी, डर के कारण।[16]

कोमल ह्रदय **यूसुफ़ रो पड़ा** जब उसे उनका सन्देश मिला। उसके आंसू बहने के कई कारण थे: (1) उन्होंने सोचा की वह अब भी उनसे द्वेष रखे है; (2) वे उसका सामना करने से डर रहे थे; (3) उन्होंने सोचा कि यूसुफ़ ने उन्हें केवल इसलिए जीने दिया क्योंकि उनका पिता अभी जीवित था; (4) उन्होंने सोचा के उस तक पहुँचने का एकमात्र सुरक्षित तरीका मध्यस्थ के द्वारा ही था; और (5) उन्होंने सोचा की केवल उनके पिता का अनुरोध ही उन्हें यूसुफ़ के क्रोध से बचा सकता है। मिस्र में सत्रह वर्ष बिताने के बाद भी (देखें 47:9, 28), उसके भाई अपने प्रति यूसुफ़ के प्रेम को या उसकी क्षमाशील आत्मा को नहीं समझ पाए थे।

आयत 18. हम नहीं जानते की यूसुफ़ के रोने और **उसके भाइयों** के पहुँचने के बीच कितना समय बीता होगा, परन्तु पाठ से ऐसा लगता है की वे तुरंत आ गए थे। यूसुफ़ की प्रवृत्ति ऊंचा रोने की थी, जैसा की 45:2 में देखा गया था। संभवतया, उसके भाई निकट ही गलियारे में या डेवढ़ी पर प्रतीक्षा कर रहे थे, और जब उन्होंने यूसुफ़ को अपने सन्देश पर रोते हुए सुना, उन्होंने तुरंत प्रवेश किया और **उसके सामने गिर पड़े**। उन्होंने उसके समक्ष अपने पापमय व्यवहार के विषय में तर्क करने का कोई प्रयास नहीं किया ना ही कोई बहाना बनाया, परन्तु केवल कहा, **"देख, हम तेरे दास हैं।"** इब्रानी में शाब्दिक अर्थ होता है, "देख, हम तेरे गुलाम हैं"; तो यूसुफ़ के भाई-बंधुओं ने फिर एक बार उसे अपने सांसारिक स्वामी के रूप में पहचाना, उसके लड़कपन के समय के स्वप्न की पूर्ति में (37:5-11)।

आयत 19. इस अवसर पर **यूसुफ़** ने यह नहीं कहा, "मैं तुम्हें क्षमा करता हूँ"; उसने तो कई वर्षों पहले उनको क्षमा कर दिया था (45:5)। वह अपने चोट पहुंचने या उनके विरुद्ध बदले की भावनाएं लिए नहीं था। ना ही यूसुफ़ ने उन्हें मेल करने और क्षमा मांगने के लिए फटकार लगाई। उसने उनसे केवल यह कहा, **"मत डरो, क्या मैं परमेश्वर की जगह पर हूँ?"**[17] वास्तव में, वह पूछ रहा था, "क्या मनुष्यों का न्याय करना और उनके द्वारा अन्याय किए जाने पर उन्हें दण्ड देना मेरा परमाधिकार है?" यह आलंकारिक प्रश्न मांग करता है "नहीं!" के उत्तर की। मनुष्य केवल पृथ्वी पर परमेश्वर का उपकरण हो सकता और उसकी इच्छा करने का प्रयत्न कर सकता है। वह कभी भी प्रभु का स्थान ले के कार्य नहीं कर सकता ना ही वह न्याय का निर्णय सुनाने या पापमय मनुष्य जाती से प्रतिशोध लेने के द्वारा उसका सिंहासन ले सकता (लैव्य. 19:18; व्यव. 32:35; रोमियों

12:19)।

आयत 20. फिर यूसुफ़ ने अपने भाइयों को समझाया की परमेश्वर दुष्ट इरादों को किसी भलाई में परिवर्तित कर देता है, अनगिनत लोगों के लिए महान आशीष लाते हुए। उसने उन्हें इन शब्दों द्वारा प्रोत्साहित किया: **"यद्यपि तुम लोगों ने मेरे लिए बुराई का विचार किया था; परन्तु परमेश्वर ने उसी बात में भलाई का विचार किया, जिससे वह ऐसा करे, जैसा आज के दिन प्रगट है, कि बहुत से लोगों के प्राण बचे हैं।"**

आयत 21. यूसुफ़ ने उन्हें डांट कर कहा मर डरो और उनसे वादा किया, **"मैं तुम्हारा और तुम्हारे बाल बच्चों का पालन-पोषण करता रहूँगा"** (देखें 43:8; 45:19; 46:5; 47:12)। परमेश्वर के अनुग्रहपूर्ण हृदय का प्रदर्शन करते हुए, **उसने उनको समझा-बुझाकर शांति दी।**

गाड़े जाने के संबंध में यूसुफ़ का निर्देश और उसकी मृत्यु (50:22-26)

[22]और यूसुफ़ अपने पिता के घराने समेत मिस्र में रहता रहा और यूसुफ़ एक सौ दस वर्ष जीवित रहा। [23]और यूसुफ़ एप्रैम के परपोतों तक देखने पाया और मनश्शे के पोते, जो माकीर के पुत्र थे, वे उत्पन्न हो कर यूसुफ़ से गोद में लिए गए। [24]और यूसुफ़ ने अपने भाइयों से कहा मैं तो मरने पर हूँ; परन्तु परमेश्वर निश्चय तुम्हारी सुधि लेगा और तुम्हें इस देश से निकाल कर उस देश में पहुँचा देगा, जिसके देने की उसने इब्राहीम, इसहाक और याकूब से शपथ खाई थी। [25]फिर यूसुफ़ ने इस्राएलियों से यह कहकर, कि परमेश्वर निश्चय तुम्हारी सुधि लेगा, उन को इस विषय की शपथ खिलाई, कि हम तेरी हड्डियों को वहाँ से उस देश में ले जाएंगे। [26]निदान यूसुफ़ एक सौ दस वर्ष का हो कर मर गया और उसकी लोथ में सुगन्ध द्रव्य भरे गए और वह लोथ मिस्र में एक सन्दूक में रखी गई।

आयत 22. यूसुफ़ ने **मिस्र** छोड़ने का प्रयास नहीं किया। वह फ़िरौन का विश्वासयोग्य बना रहा, जिसने, परमेश्वर के दूरदर्शी कार्य के द्वारा, बंदीगृह से उसे बचाया और मिस्री सरकार में दूसरे सबसे बड़े अधिकारी के रूप में स्थापित किया। इसके बदले, वह मिस्र के लोग तथा दक्षिण-पूर्व भूमध्य क्षेत्र के लोगों के लिए सात वर्ष के भयंकर अकाल से निपटने के लिए अनाज एकत्र कर बुद्धिमानी से उसका प्रयोग कर आशीष का कारण ठहरा। इस प्रकार, वह कुलपतियों को, अब्राहम से प्रारंभ होकर, दिए गए आदेश कि "आशीष का मूल हो" (12:2) का भाग हुआ। इसके साथ ही, उसने मूल प्रतिज्ञा, "भूमण्डल के सारे कुल तेरे द्वारा आशीष पाएंगे" (12:3) में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

अपने जीवन के पूरे दिन उसने **अपने पिता के घराने** संग मिस्र में बिताए और उसकी मृत्यु, मिस्र की अच्छी आयु समझी जाती थी, **एक सौ दस वर्ष** की अवस्था में हुई (47:9, 10 की टिप्पणी देखें)। उसने अपने जीवन के प्रथम सत्रह

वर्ष कनान में और शेष तिरानवे वर्ष मिस्र में बिताए; इसलिए राजनैतिक तथा संस्कृति के दृष्टिकोण से वह इब्रानी कम और मिस्री अधिक था। धर्म के दृष्टिकोण से उसने अब्राहम, इसहाक और याकूब के परमेश्वर, *एल शद्दाई* पर विश्वास किया था। वह जानता था कि याकूब के परिवार के लिए यह परमेश्वर की इच्छा थी कि वे मिस्र में रहें जहाँ वह उन्हें एक बड़ा राष्ट्र बनाएगा। समय के पूरा होने के साथ ही परमेश्वर, उन्हें कनान देश में ले जाएगा और वह उसे उनके निज भाग तथा स्वदेश के रूप में देगा।

आयत 23. बाइबल के दिनों में दीर्घायु जी कर नाती पोतों को देखना,जीवन का सबसे बड़ा आनंद और उपलब्धि समझा जाता था (अय्यूब 42:16; भजन 128:6; नीति. 17:6)। **यूसुफ़** ने लंबी आयु जी कर **एप्रैम के पुत्रों** के द्वारा **तीसरी पीढ़ी** (अपने परपोतों) को देखा। इसके साथ ही यूसुफ़ ने अपने अन्य परपोतों, **मनश्शे के पोते, जो माकीर के पुत्र थे**, भी देखे। वे पैदा होकर यूसुफ़ के गोद में रखे गए, वैसे ही जैसे याकूब ने यूसुफ़ के दोनों पुत्रों, एप्रैम और मनश्शे को गोद में रखे गए और उन्हें गोद लिया (48:12 का टिप्पणी देखें)। तब यूसुफ़ भी एप्रैम के पुत्रों की तीसरी पीढ़ी को भी गोद लेकर आशीषित हुआ। कई पीढ़ियों के बाद मनश्शे के पोते, माकीर के पुत्र सामर्थशाली योद्धा और कनान विजय के सेना नायक बने (न्यायियों 5:14)।

आयत 24. न केवल **यूसुफ़** दीर्घायु जीया बल्कि उसका जीवन परमेश्वर और फ़िरौन की ओर से कई प्रकार के आशीषों से भरा हुआ था। वह दासता के निम्न स्तर से उठकर धन-सम्पदा, बल और यश प्राप्त कर मिस्र का दूसरा सबसे बड़ा अधिकारी बना। इतनी अधिक यश तथा कई सांसारिक उपलब्धि प्राप्त कर भी वह परमेश्वर का नम्र आदमी था। जब उसे लगा कि उसका जीवन समाप्त होने वाला है और वह **मरने पर है** तो उसने **अपने भाइयों** को अपनी अंतिम बातें कहने के लिए कि उनके लिए गवाही ठहरे, बुलाया। उसके वक्तव्य, चाहे व्यक्तिगत या फिर पारिवारिक हो, में कोई घमण्ड की बातें नहीं पाई जाती थी। इन भाइयों का जीवन और उनकी संतानों का भविष्य, परमेश्वर के पूर्ण अनुग्रह पर ही निर्भर था।

इसलिए, यूसुफ़ ने इस बात पर बल दिया कि जब वे मिस्र में हैं तो परमेश्वर निश्चय उनकी सुधि लेगा। यहाँ इब्रानी शब्द פָּקַד *(पाकाद)* प्रयोग किया गया है जिसका शाब्दिक अर्थ "मिलने आना" (KJV) है। NIV इस पहेली का विश्लेषण करता है परमेश्वर "निश्चय [तुम्हारी] सहायता करने के लिए आएगा।" इन शब्दों की पूर्ति निर्गमन की पुस्तक में पाई जाती है जहाँ *पाकाद*, परमेश्वर का इस्राएलियों के बंधुआई के मध्य उसकी चिंता और उसका हस्तक्षेप पाया जाता है (निर्गमन 3:16; 4:31; 13:19)।

यूसुफ़ ने यह भी समझा कि मिस्र इस्राएलियों का स्थाई घर नहीं होगा। निकट भविष्य में जब वे बढ़ जाएंगे तो परमेश्वर उन्हें उस **देश से निकाल कर उस देश में पहुँचा देगा, जिसके देने की उसने अब्राहम, इसहाक और याकूब से शपथ खाई थी** (12:7; 17:8; 26:3; 28:13; 35:12)।

आयत 25. यूसुफ़ ने इस बात को दोहराया कि परमेश्वर निश्चय उसके भाइयों का सुधि *(पाकाद)* लेगा। यह कुलपतियों को दिए गए परमेश्वर की प्रतिज्ञा कि वह उनकी सुधि लेगा और उन्हें आशीष देगा, की परिपूर्णता है (12:1-3; 26:3; 28:15; 31:3; देखें 48:21)। जिस तरह याकूब ने यूसुफ़ को कनान में उसके गाड़े जाने के संबंध में शपथ खिलाई थी (47:29-31; देखें 49:29-32), तो उसी प्रकार यूसुफ़ ने भी अपने भाइयों को शपथ खिलाई कि जब वे मिस्र छोड़कर जाएं तो उसकी हड्डियों को भी अपने साथ ले जाएं। कई वर्षों बाद, निर्गमन के समय, मूसा ने यूसुफ़ का अपने भाइयों को दी हुई शपथ का आदर किया। इस्राएलियों ने जब मिस्र छोड़ा तो उसकी हड्डियों को अपने साथ ले गए (निर्गमन 13:19)।

यूसुफ़ का उसके भाइयों को उसकी हड्डियों के संबंध में अंतिम निर्देश विश्वास की गवाही के रूप में कार्य करता है। यूसुफ़ के जीवन की कई स्मरणीय घटनाओं में से, यह एक घटना है जो इब्रानियों की पत्री के लेखक के मस्तिष्क में छाई हुई है जिसने यूसुफ़ को विश्वास के नायकों के अध्याय में सम्मिलित किया (इब्रा. 11:22)। यहोशू की विजय गाथा के अंत एवं न्यायियों की समय के आरंभ में, इस्राएलियों ने यूसुफ़ की हड्डियों को शकेम में दफ़नाया, जहाँ याकूब ने शकेम के पिता हमोर से भूमि का एक टुकड़ा खरीदा था (यहोशू 24:32; देखें उत्पत्ति 33:19)।

आयत 26. उत्पत्ति के वृतांत को लेखक ने इस वक्तव्य के साथ समाप्त किया कि **निदान यूसुफ़ एक सौ दस वर्ष का हो कर मर गया** (50:22) और इसके साथ यह भी जोड़ा कि **उसकी लोथ में सुगन्ध द्रव्य** (50:2, 3 की टिप्पणी देखें) **भरे गए और वह लोथ मिस्र में एक सन्दूक में रखी गई**। पुराने नियम में यही एकलौता संदर्भ है जहाँ सन्दूक के बारे में लिखा हुआ है और यह बात यह दर्शाता है कि यूसुफ़ बाहरी दृष्टिकोण से एक मिस्री था। परंतु, मन से वह अपने पूर्वजों के परमेश्वर को समर्पित एक इस्राएली बना रहा। इस आशा के साथ कि जब उनके संतान प्रतिज्ञा के देश पर विजय प्राप्त कर लेंगे तो वे उसकी हड्डियों को मिस्र से ले जाएंगे और वह अपने पूर्वजों के साथ सोएगा, वह इस जीवित विश्वास के साथ वह मरा।

अनुप्रयोग

मृत्यु की अवस्था में आशा (50:1-14)

एक व्यक्ति विशेष, अपनी या दूसरों की मृत्यु के बारे में जो विचारधारा रखता है, वह उसके बारे में बहुत कुछ बताता है। कुछ लोग भय और संदेह के साथ मृत्यु का सामना करते हैं जबकि अन्य इसका सामना विश्वास और भरोसे के साथ करते हैं।

एक विश्वासी को मृत्यु की घड़ी में आशा ही स्थिर रखती है। इब्रानियों के लेखक ने कहा, "अब विश्वास आशा की हुई वस्तुओं का निश्चय और अनदेखी

वस्तुओं का प्रमाण है। क्योंकि इसी के विषय में प्राचीनों की अच्छी गवाही दी गई" (इब्रा. 11:1, 2)। व्यावहारिक रूप से कोई भी यह प्रमाणित नहीं कर सकता है कि भविष्य किसके लिए क्या संजोए हुए है और इसी कारण कई लोग मृत्यु के लिए तैयार होने में असफल हो जाते हैं। फिर भी, बुद्धिमान, भविष्य की "घोर अन्धकार से भरी हुई तराई में होकर" चलने के लिए तैयार रहता है (भजन 23:4)।

उत्पत्ति में (और याकूब के जीवन में)। याकूब की मृत्यु के साथ मुठभेड़ से उसके जीवन में मिश्रित प्रतिक्रियाएं पैदा हुई; परंतु जब उसके मृत्यु की घड़ी आई तो उसने अपने परिवार के भविष्य और परमेश्वर की प्रतिज्ञा के परिपूर्णता की ओर दृष्टि की। बाइबल के प्रसिद्ध लोगों की सूची में याकूब सब का ध्यान आकर्षित करता है परंतु इस संदर्भ में केवल एक ही आयत लिखी गई है "विश्वास ही से याकूब ने मरते समय यूसुफ़ के दोनों पुत्रों में से एक-एक को आशीष दी और अपनी लाठी के सिरे पर सहारा लेकर दण्डवत किया" (इब्रा. 11:21)। यह वक्तव्य याकूब के जीवन के अंतिम दिनों की ओर इशारा करता है और पाठकों को यह समझने में सहायता करता है कि किस प्रकार याकूब अपने कई संघर्षपूर्ण वर्ष जीने के बाद ऐसा विश्वास कर पाया।

पापमय संसार में धार्मिक जीवन जीना इतना आसान नहीं है और परमेश्वर के लोगों को परमेश्वर के प्रति अपना समर्पण बनाए रखने के लिए, हमेशा स्वार्थीपन, धोखा, स्व-इच्छा और खराई से वंचित होने इत्यादि जैसी परीक्षाओं से संघर्ष करना पड़ता है। ऐसा लगता है कि ये परीक्षाएं याकूब के साथ कुछ ज़्यादा ही थी। कुलपति के जीवन के अधिकांश भाग से, ऐसा प्रतीत होता है कि वह एक ऐसे मार्ग में यात्रा कर रहा था जिसमें बाधाएं अधिक थीं, जिसने उसके जीवन को दुर्गम बनाया और परमेश्वर के जन के रूप में उसकी गवाही को नुकसान पहुँचाया। जब उसने यूसुफ़ के रक्त रंजित अंगरखा देखा और अनुमान लगाया कि उसका पुत्र मर चुका है, तो वह जीवन से हताश हो चुका था (37:33-35)। यह एक ऐसी घटना थी मानो उसने उसके जीवन की सारी आशा और आनंद समाप्त कर दी हो। वह शांत नहीं होना चाहता था और उसने कहा, "मैं तो विलाप करता हुआ अपने पुत्र के पास अधोलोक में उतर जाऊँगा" (37:35)। इस क्षण वह एक ऐसी सुरंग में घुस गया था मानो जिसका न अंत है और न ही उसमें कोई रोशनी है।

वर्षों बाद याकूब के पुत्र मिस्र में अनाज लेने के लिए गए और वहाँ उनका एक सामर्थशाली शासक (यूसुफ़) से सामना हुआ जिसने उन पर भेदिए होने का आरोप लगाया। उसने शिमोन को बंदी बनाया और उनसे कहा कि वे तभी और अनाज खरीद पाएंगे जब वे अगली बार अपने सबसे छोटे भाई बिन्यामीन को साथ लेकर मिस्र आएंगे। भाई कनान लौट आए और उन्होंने मिस्री शासक की शर्त को अपने पिता के सामने रखा, परंतु याकूब ने अपने सबसे छोटे पुत्र को उनके साथ मिस्र जाने की अनुमति नहीं दी। उसके इस उत्तर से यह पता चलता है कि वह अभी भी क्रोधित था और उन पर भरोसा नहीं करता था और उसके

इस दशा से यह भी पता चलता है कि वह अभी भी खेदित और टूटा हुआ व्यक्ति था। उसने अपने पुत्रों से कहा, "मुझ को तुम ने निर्वंश कर दिया, देखो, यूसुफ़ नहीं रहा और शिमोन भी नहीं आया और अब तुम बिन्यामीन को भी ले जाना चाहते हो: ये सब विपत्तियां मेरे ऊपर आ पड़ी हैं" (42:36)।

जब अकाल नहीं थमा और पूरे परिवार की भूखे मरने की नौबत आई तो बूढ़े कुलपति की नाराज़गी कम हुई। जब यहूदा ने कहा कि वह बिन्यामीन की सुरक्षा की गारंटी लेगा तो उसने अपनी आपत्ति पर पुनर्विचार किया। इसका तात्पर्य यह हुआ कि यदि वह अपने छोटे भाई को सुरक्षित घर नहीं लाता है तो उसका पिता उसी को ही इसका ज़िम्मेदार ठहराएगा।

याकूब के पुत्र यह संदेश लेकर मिस्र से लौटे कि यूसुफ़ जीवित है और वह वहां की सरकार में एक सामर्थशाली शासक है और उन्होंने यह भी बताया कि फ़िरौन के आशीर्वाद से उनके लिए यह व्यवस्था की गई है कि वे पूरे परिवार के साथ मिस्र में जाकर रह सकते हैं। वे अब यूसुफ़ के निकट रह सकते हैं और उस देश के उत्तम चीजों का आनंद उठा सकते हैं।

इस संदेश से याकूब के जीवन में आत्मिक पुनरुत्थान आया। 130 वर्ष की अवस्था में (47:9) वह आत्मिक रूप से मर चुका था; उसका देह, आशाहीन, जीवन रहित हड्डियों के ढाँचे के समान था। फिर "जब उसने उन गाडियों को देखा, जो यूसुफ़ ने उसके ले आने के लिये भेजीं थीं, तब उसका चित्त स्थिर हो गया और इस्राएल ने कहा, बस, मेरा पुत्र यूसुफ़ अब तक जीवित है: मैं अपनी मृत्यु से पहिले जा कर उसको देखूँगा" (45:27, 28)।[18]

जब याकूब और उसका परिवार ने हेब्रोन से मिस्र के लिए एक लंबी यात्रा प्रारंभ की तो वे मार्ग में बेर्शेबा नामक स्थान में रूके। वहाँ कुलपति ने परमेश्वर को बलिदान चढ़ाया (46:1)। संभवतः यह यूसुफ़ को आशीर्वाद देने और उसके जीवन को सुरक्षित रखने के लिए धन्यवाद बलि चढ़ाई गई थी कि उसका बूढ़ा बाप उसे एक बार फिर मिस्र में देख सकता था। इस अवसर पर उसने पूर्ववर्ती समय के समान, जब वह जवान था और अपने भाई एसाव के क्रोध के डर से भाग रहा था, तो परमेश्वर से कोई सौदा नहीं किया और न ही उसने कोई शर्त रखी (28:20-22)। कई वर्षों पश्चात, वह परमेश्वर की महानता, दया और अनुग्रह को अनुभव कर रहा था जिसने यूसुफ़ की रक्षा की और पूरे परिवार को मिस्र में फिर से मिलने का अवसर प्रदान किया।

याकूब के परिवार ने - अच्छे और बुरे दिन, विजय और पराजय, आनंदमय क्षण जो पाप और झगड़े के कारण हृदय वेदना में परिवर्तित हुआ, का सामना किया। इन सभी बातों में परमेश्वर का सामर्थ और सहायता प्रदान करने वाला हाथ उनके जीवन में कार्य करता रहा। अब यूसुफ़ को परमेश्वर ने फ़िरौन के जीवन को प्रभावित करने के लिए तैयार किया जिसके कारण उनकी सभी आवश्यकताएं मिस्र में पूरी हो रही थी। उस स्थान पर, परमेश्वर की प्रतिज्ञा के अनुसार, अब इस्राएल एक बड़ी जाति के रूप में बढ़ रहे थे।

जब याकूब ने बेर्शेबा में परमेश्वर को बलिदान चढ़ाया तो परमेश्वर एक शुभ

संदेश लेकर दोबारा उस पर प्रकट हुआ। उसने कहा कि वह मिस्र जाने से न डरे क्योंकि वह उसके साथ रहेगा[19] और वहाँ वे एक बड़ी जाति के रूप में बढ़ जाएंगे। उसने याकूब को यह प्रतिज्ञा भी दी कि वह उसे किसी दिन कनान वापस लाएगा और यूसुफ़ मृत्यु के समय उसके आँखों पर हाथ लगाएगा (46:2-4)।

जब याकूब अपने परिवार के साथ मिस्र पहुँचा तो यूसुफ़ अपने पिता और अपने पाँच भाइयों को महल में फ़िरौन से मिलने के लिए ले गया। याकूब ने राजा को, जो कुछ उसने यूसुफ़ और उसके पूरे परिवार के लिए किया था उसके लिए उसने आगे बढ़कर उसको आशीर्वाद दिया (47:7)। फ़िरौन ने उससे पूछा, "तेरी अवस्था कितने दिन की हुई है?" (47:8)। बिना किसी हिचकिचाहट के याकूब ने राजा को दो शिकायत के साथ उत्तर दिया। प्रथम, कि वह 130 वर्ष का हो चुका है परंतु उसने परदेशी होकर अपने पूर्वजों की अवस्था प्राप्त नहीं की है। द्वितीय, कि उसके जीवन के दिन "सुखमय" नहीं रहे हैं (47:9)। फ़िरौन ने उसे उसके इस अंतिम वक्तव्य का विश्लेषण करने के लिए नहीं कहा। संभवतः यूसुफ़ ने पहले ही राजा को यह बता दिया होगा कि किस प्रकार उसके पिता ने बीस से भी अधिक वर्षों तक यह सोचकर विलाप किया कि वह (यूसुफ़) मर चुका है। अपने बारे में अधिक कुछ कहे बिना उसने राजा को उसके उदारता और दया के लिए एक बार फिर आशीर्वाद दिया और फिर वह महल से चला गया (47:7-10)।

अभी भी यह जानकर आश्चर्य होता है कि "याकूब, जैसे एक गुमनाम चरवाहे को उसकी मृत्यु पर शानदार राजकीय सम्मान, मानो जैसे कि वह कोई मिस्री सरकार में बड़ा अधिकारी रहा हो, को कैसे मिला?" इस प्रश्न का उत्तर तीन भागों में दिया जा सकता है।

प्रथम, उससे एक असाधारण पुत्र, यूसुफ़, पैदा हुआ जो अपने दासता के दिनों में परिपक्व हुआ और जिसने फ़िरौन का ईमानदार तथा विश्वासयोग्य सेवक होने के गुण को सिद्ध किया। मिस्र के शासक के रूप में वह नम्र बना रहा और उसने परमेश्वर को अपने बुद्धि और निर्णय का श्रेय दिया जिसके कारण मिस्र और उसके आसपास के देशों का भुखमरी के समय बचाव हो सका।

द्वितीय, अब्राहम के वंशज, याकूब के लोगों का आशा और स्वप्न महत्वहीन नहीं था। परमेश्वर ने उन्हें मिस्र में चार सौ वर्षों की निवास के लिए प्रतिज्ञा दी थी ताकि वे एक बड़े राष्ट्र के रूप में बढ़ें (15:13-16) और फिर किसी दिन प्रतिज्ञा की देश (कनान) में लौटें।

याकूब के पास अब भी उत्साह के साथ जीने का कारण था। जबकि हम उसके जीवन के अंतिम सत्रह वर्ष के बारे में अधिक नहीं जानते हैं, लेकिन हमें यह बताया गया है कि उसने यूसुफ़ के दोनों पुत्रों एप्रैम और मनश्शे को गोद लिया और उन्हें आशीष दी (48:9-22; इब्रा. 11:21)। इसके साथ ही, उसने अपने दूसरे पुत्रों को भी उनके भविष्य और भावी पीढ़ियों के बारे में आशीष दी। अपने परिवार के सदस्यों से घिर कर उसने मिस्र में परमेश्वर की आशीषों का आनंद उठाया। इससे पहले कि याकूब अंतिम सांस लेता उसने अपने बच्चों के लिए

विश्वास और भविष्य की आशा का जीवंत उदाहरण छोड़ा।

तृतीय, याकूब ने अपने अनुभव से यह जाना कि परमेश्वर की प्रतिज्ञाएं सत्य थीं। इसके साथ कि उसका जीवन दुःख एवं पराजय से बिगाड़ा गया, इसमें सफलता तथा विजय का मिश्रण था। परमेश्वर ने याकूब और उसके वंशजों के जीवन की भलाई के लिए अपनी योजना के अनुसार कार्य किया था (रोमियों 8:28)।

उस पिता ने जो पुत्र शोक में यह कहा था कि वह रोते-रोते कब्र में चला जाएगा वास्तव में उसकी आँखों को यूसुफ़ के हाथों ने ही बंद किया था और उसके मृत देह को मकपेला के गुफ़ा तक ले गया था। वह यह जानते हुए मरा कि उसकी संतान एक दिन कनान लौट आएंगे और उस देश को परमेश्वर द्वारा प्रदान किए गए भाग के रूप में प्राप्त करेंगे। याकूब ने जिस आशा और विश्वास का प्रदर्शन अपने जीवन के अंतिम क्षण में किया था उससे उत्साहित होकर यूसुफ़ ने फ़िरौन को अपने पिता की अंतिम इच्छा बताई और फिर राजा ने राजकीय सम्मान के साथ मिस्र के सैनिक और अधिकारियों के संग परिवार के साथ मिलकर कुलपति के देह को उसके अंतिम पड़ाव कनान तक पहुँचाया। यह फ़िरौन के सबसे सम्मानित सेवक यूसुफ़ के पिता की अंतिम विदाई थी; और याकूब का यह विश्वास कि परमेश्वर एक दिन उसके परिवार को प्रतिज्ञा किये देश में ले जाएगा, एक विश्वासी को मृत्यु के अंतिम घड़ी में उसका विश्वास उसको कैसे स्थिर करता है, का अनूठा नमूना बन गया।

नए नियम में (और मसीह के अनुयायियों में)। नए नियम में ऐसे कई उदाहरण है जहाँ लोगों ने यीशु की क्रूस पर मृत्यु के द्वारा आशा प्राप्त की।

1. एक बेनाम डाकू ने भी जो यीशु के साथ मरा था, इस आशा को प्राप्त किया। यह डाकू जो क्रूस पर था, वह व्यवस्था का पालन करने वाले लोगों, जिन्होंने यीशु का अनुकरण उसके व्यक्तिगत सेवकाई के समय किया, से भिन्न था। स्पष्टतया, यह कोई साधारण डाकू नहीं था, क्योंकि रोम ने यहूदियों को साधारण अपराधियों पर उनके सभा में मुकद्दमा चलाने और उन्हें दण्ड देने का अधिकार दिया हुआ था। इसलिए, इस व्यक्ति एवं अन्य डाकुओं ने जो अपराध किए वह रोमी साम्राज्य के विरूद्ध गम्भीर अपराध रहे होंगे। संभवतः उनके अपराध चुंगी लेने वालों को मौत के घाट उतारना या रोमी कोषागार में जमा होने वाले पैसा चुराना हो सकता है।

मसीह के क्रूसीकरण के आरंभिक घड़ी में इन दोनों अपराधियों या डाकुओं ने उन लोगों के साथ जो यीशु का मज़ाक उड़ा रहे थे, में स्वर मिलाया होगा (मत्ती 27:44; मरकुस 15:32)। जब मज़ाक उड़ाना और ठट्ठा करना जारी था तो इस डाकू ने दूसरे डाकू को झिड़का, "क्या तू परमेश्वर से भी नहीं डरता? तू भी तो वही दण्ड पा रहा है" (लूका 23:40)। उसने यह अंगीकार किया कि दोनों को उनके अपराध के अनुसार उचित दण्ड मिल रहा है और उसने यीशु के बारे में यह स्वीकार किया कि, "इस ने कोई अनुचित काम नहीं किया" (लूका 23:41)। इस डाकू को यह समझ आ गया था कि जो व्यक्ति बीच के क्रूस पर लटकाया गया है

वह निर्दोष है और उसे अनुचित रीति से उसे मृत्यु दण्ड दिया जा रहा है। लूका 23:34 के अनुसार इस व्यक्ति ने यीशु की उस प्रार्थना को पहले ही सुन लिया था जिसमें उसने उन लोगों के क्षमा के लिए प्रार्थना की थी जो उसे क्रूस पर चढ़ा रहे थे। स्पष्ट रूप से कोई भी किसी अपराधी से इस प्रकार के प्रत्युत्तर की अपेक्षा नहीं कर सकता है। पश्चातापी अपराधी ने यीशु की ओर मुड़कर कहा, "हे यीशु, जब तू अपने राज्य में आए, तो मेरी सुधि लेना।" उस ने उस से कहा, "मैं तुझ से सच कहता हूँ; कि आज ही तू मेरे साथ स्वर्ग लोक में होगा" (लूका 23:42, 43)।

हमें मूल पाठ में यह नहीं बताया गया है कि इस अपराधी की मृत्यु ने वहाँ एकत्रित लोगों पर कैसा प्रभाव डाला या फिर कोई प्रभाव नहीं डाला; परंतु हम यह जानते हैं कि इस घटना के द्वारा इस व्यक्ति में उद्धार प्राप्त करने की इच्छा जागी। उसका हृदय परिवर्तन, किसी व्यक्ति द्वारा आपात काल में धर्म परिवर्तन करने जैसा नहीं है जो परमेश्वर पर विश्वास करने जैसा शपथ खाते हैं किंतु जैसे ही, खतरा टल जाता है तो वे इस शपथ को भुला देते हैं। जब डाकू ने कहा, "हे यीशु, जब तू अपने राज्य में आए, तो मेरी सुधि लेना," तो वह यीशु के दावों पर, जबकि वह उसे अधिक नहीं जानता था, विश्वास कर रहा था। वह यीशु से यह विनती कर रहा था कि वह उसे अनुग्रह सहित पाप क्षमा के लिए उसके राज्य, जो इस संसार का नहीं है, में स्मरण रखे। यद्यपि लोगों को उद्धार देने के लिए यीशु का यह आम तरीका नहीं है फिर भी उस मरते हुए पश्चातापी डाकू के उदाहरण ने लोगों को दो हज़ार वर्षों से भी अधिक समय से यह जानने के लिए प्रेरित किया है कि प्रभु ने इस विश्वासी को उस दुर्भाग्यपूर्ण घड़ी में भी नहीं त्यागा या फिर उसके निवेदन को नहीं धिक्कारा।

2. स्तिफनुस एक दूसरा उदाहरण है, जब मृत्यु निकट थी तो वह भी आशा के द्वारा ही स्थिर रहा। वह प्रथम मसीही शहीद था। उस पर "मूसा के विरूद्ध" और यरूशलेम की सभा में परमेश्वर के विरूद्ध निंदा भरे शब्द बोलने का आरोप लगाया गया था (प्रेरित 6:8-11)। उस पर यहूदी सभा, जो उच्च यहूदी न्यायालय है, के सम्मुख मुकद्दमा चलाया गया और उसके विरूद्ध झूठे गवाह खड़े किए गए (प्रेरितों. 6:12-15)। एक लंबी सुनवाई के बाद, मुकद्दमा का चरम सीमा तक आया जब स्तिफनुस ने अपने न्यायाधीशों पर एक निर्दोष व्यक्ति यीशु, "जो धर्मी" था (प्रेरितों. 7:52), जिसके बारे में यशायाह भविष्यवक्ता ने भी भविष्यवाणी की थी (यशा. 53:11) को मृत्यु दण्ड देने का आरोप लगाया। इस कारण और अन्य दोषारोपण के कारण उसके विरोधियों ने उसे नगर से बाहर निकाला और उसे पथराव करने लगे। वह उच्च स्वर से चिल्लाया, "हे प्रभु यीशु, मेरी आत्मा को ग्रहण कर" (प्रेरितों. 7:59) और उसने यह प्रार्थना की, "हे प्रभु, यह पाप उन पर मत लगा" (प्रेरितों. 7:60)।

स्तिफनुस अपने पथराव करने वालों के लिए कैसे प्रार्थना कर सकता था? इसका उत्तर यह है कि उसने यीशु का क्रूस पर पाप क्षमा की प्रार्थना के बारे में सुना होगा "हे पिता, इन्हें क्षमा कर, क्योंकि ये नहीं जानते कि क्या कर रहें हैं" (लूका 23:34)। वह यीशु का पुनरुत्थान और उसका "मनुष्य के पुत्र" के रूप में

स्वर्गारोहण के बारे में जानता था (प्रेरितों. 7:56)। इन सच्चाइयों ने उसे आशा दी। जिस प्रकार यीशु ने मरते हुए डाकू को प्रतिज्ञा दी थी कि वह आज ही उसके साथ स्वर्ग लोक में होगा (लूका 23:43), स्तिफनुस ने भी अपने मृत्यु के समय ऐसा ही विश्वास किया।

3. तरसुस का शाऊल (जो बाद में पौलुस प्रेरित के नाम से जाना जाने लगा), एक उत्कृष्ट उदाहरण है कि किस प्रकार एक विश्वासी को आशा के साथ जीवन और मृत्यु का सामना करना चाहिए। अपने जीवन के आरंभिक काल में वह मसीहत का कट्टर शत्रु, यीशु मसीह के विश्वासियों को सताने वाला था। फरीसी के रूप में उसकी शिक्षा यरूशलेम में गमालिएल के चरणों में हुई, वह उस भीड़ के संग था जिन्होंने स्तिफनुस को यह कहते सुना कि वह स्वर्ग को खुला हुआ देखता है और यीशु, "मनुष्य के पुत्र को परमेश्वर के दाहिनी ओर खड़ा हुआ देखता है" (प्रेरितों. 7:56)। शाऊल ने कुछ अन्य लोगों को भी मरते हुए देखा था, लेकिन उसने किसी को भी इस मसीही शहीद के समान मरते हुए नहीं देखा था। शाऊल उसके अंतिम वचनों के द्वारा अशांत हुआ होगा "हे प्रभु यीशु, मेरी आत्मा को ग्रहण कर"; "हे प्रभु, यह पाप उन पर मत लगा" (प्रेरितों. 7:59, 60)। स्तिफनुस की अंतिम प्रार्थना के बारे में, जिसमें यीशु का क्रूस पर किए गए प्रार्थना की प्रतिध्वनि दिखाई देती है, महान धर्म विज्ञानी अगस्तीन (354-430 ई.) ने कहा, "यदि स्तिफनुस ने ऐसी प्रार्थना नहीं की होती तो कलीसिया को कभी भी पौलुस नहीं मिलता।"[20]

जब शाऊल ने मसीहियों के विरूद्ध अपने सताव को जारी रखा तो अगस्तीन के इस वक्तव्य का कारण बाइबल वृतांत में जल्दी ही दिखने लगा था। स्तिफनुस की मृत्यु को अधिक समय नहीं हुआ था जब शाऊल दमिश्क की ओर मसीहियों को बंदी बनाने के लिए जा रहा था कि उन्हें बांधकर मुकद्दमे के लिए यरूशलेम ले आए। तभी यीशु उस पर प्रकट हुआ और उससे कहा, "हे शाऊल, हे शाऊल, तू मुझे क्यों सताता है?" चकित होकर उसने पूछा, "तू कौन है प्रभु जिसे मैं सताता हूँ?" जवाब तुरंत आया, "मैं यीशु हूँ; जिसे तू सताता है" (प्रेरितों. 9:4, 5)। यह घटना प्रेरितों के काम की पुस्तक में दो बार दोहराया गया है जब पौलुस ने इसे अपने श्रोताओं को बताया था। इसका अंतिम संदर्भ कैसरिया की बंधुआई के दो वर्ष पश्चात प्रस्तुत किया गया है। पौलुस को रोमी राज्यपाल और राजा अग्रिपा के सम्मुख सुनवाई के लिए प्रस्तुत किया गया था और इस बार लूका ने यीशु के एक अतिरिक्त वक्तव्य, जिसे उसने पौलुस को दमिश्क के मार्ग में बोला था, लिख दिया। यह पूछने पर कि पौलुस उसे क्यों सता रहा है, प्रभु ने उत्तर दिया, "पैने पर लात मारना तेरे लिये कठिन है" (प्रेरितों. 26:14)। पैनी वस्तु एक नुकीली छड़ी होती थी और कभी-कभी इसके छोर पर नोकीला धातु लगा दिया जाता था, जिसे बैलगाड़ी का चालक हठीले बैल को विभिन्न दिशा में निर्देशित करने या तेज़ रफ्तार से हाँकने के लिए उसके शरीर के पिछले भाग में चुभाता था। जब हठीला बैल इस पैनी छड़ी के विरूद्ध लात मारता था तो ऐसा करने से वह अपने आपको अधिक नुकसान पहुँचाता था।

संक्षिप्त में, पौलुस भी मसीहियों को सताकर ऐसा ही कर रहा था। वास्तव में वह अपने विवेक को ही नुकसान पहुँचा रहा था और आत्मिक रूप से अपने आपको टुकड़े-टुकड़े कर रहा था। जितनी बार उसने मसीहियों को बंदी बनाया और उनको मृत्यु दण्ड देने के लिए आवाज़ उठाई, उतना ही उसने यह अहसास किया कि वे अच्छे थे और परमेश्वर का भय मानते थे। वे परमेश्वर की व्यवस्था के प्रति बलवा नहीं करते थे; बल्कि उन्होंने यह विश्वास किया कि यीशु, मसीह था जिसे परमेश्वर ने संसार में भेजा था। संभवतः वह यह जानने लग गया होगा कि यीशु को सारे जगत के पाप के लिए "दुःख उठाने वाले सेवक" के रूप में यशायाह की भविष्यवाणी (यशा. 53:5, 6) की पूर्ति हेतु, जैसे कि स्तिफनुस ने भी कहा था, क्रूस पर चढ़ाया गया था। जब यीशु दमिश्क के मार्ग में उस पर प्रकट हुआ तो वह इस बात से निश्चित हो गया था कि जो स्तिफनुस ने कहा था वह सत्य था यशायाह की भविष्यवाणी के अनुसार परमेश्वर ने उसे मृतकों में से जिलाया (यशा. 53:7-12)। इसके साथ ही, शाऊल को, जैसे स्तिफनुस ने कहा था, ज्ञात हो गया था कि दानियेल के दर्शन के अनुसार मनुष्य के पुत्र का स्वर्ग में परमेश्वर के सिंहासन के सम्मुख आरोहण, यीशु का स्वर्गारोहण के द्वारा पूरा हो गया है (प्रेरितों. 7:56)।

यीशु के स्वर्गारोहण का उद्देश्य, उसको अनंतकाल का राज्य प्राप्त करना था जो सभी जाति तथा राष्ट्रों का बना हो (दानिय्येल 7:13, 14)।[21] इसीलिए यीशु ने शाऊल (पौलुस) को अन्य जातियों में सुसमाचार सुनाने का आदेश दिया। इन युगों में परमेश्वर की यही योजना रही है; इसी कारण उसने महान आदेश दिए (मत्ती 28:18-20; मरकुस 16:15, 16)। कलीसिया को पौलुस जैसे व्यक्तित्व की आवश्यकता थी जो अन्य जातियों में सुसमाचार प्रचार करने की ओर कदम उठा सके। वह दो जगत का व्यक्ति था विरासत और ज्ञान में यहूदी परंतु भाषा और संस्कृति में अन्य जाति। स्तिफनुस का मनुष्य के पुत्र का दर्शन, जो परमेश्वर के सिंहासन के सम्मुख अनंतकाल का राज्य प्राप्त करने के लिए उठा लिया गया था, वह पौलुस पर दमिश्क के मार्ग में प्रभु के प्रकट होने के द्वारा पूरा हुआ (प्रेरितों. 26:17, 18; कुलु. 1:12-14)। इस सभी घटनाओं ने पौलुस पर गहरा प्रभाव डाला उसका जीवन पूरी तरह बदल गया और मसीहियों का सबसे बड़ा सताने वाला, सबसे बड़ा सुसमाचार प्रचारक बना।

स्तिफनुस की मृत्यु के समय उसका विश्वास और आशा ने पौलुस को यह मानने के लिए विवश किया कि जीवन केवल जीने के लिए ही नहीं है और न ही मृत्यु केवल मरने के लिए है। यह ज्ञान कि यीशु मरा, कि पापियों पर दण्ड की आज्ञा न हो बल्कि उसका क्रूस पर बलिदान पूर्ण मृत्यु के द्वारा उनको पाप क्षमा मिले, ने पौलुस को आशा प्रदान की, कि सबसे बड़े पापी का भी उद्धार हो सकता है (1 तीमु. 1:12-17)। इसी आशा ने पौलुस को रोमी साम्राज्य के नगरों में सुसमाचार सुनाने के लिए विवश किया जहाँ कई कलीसियाएं स्थापित हुईं। उसके सुसमाचार प्रचार की सफलता का उसी प्रकार विरोध किया गया जिस प्रकार पौलुस ने मसीहियों का विरोध पहले किया था। उसको कोड़े मारे गए,

पथराव किया गया, बंदी बनाया गया एवं अन्य कई प्रकार के सताव का भी उसने सामना किया (2 कुरि. 11:22-28); लेकिन उसने इन संकटों से अपने आपको निराश नहीं होने दिया। रोम के मसीहियों के नाम अपने पत्री में उसने लिखा है कि कौन हम को मसीह के प्रेम से अलग करेगा? क्या क्लेश, या संकट, या उपद्रव, या अकाल, या नंगाई, या जोखिम, या तलवार? (रोमियों 8:35-39)।

पौलुस ने जवान प्रचारक तीमुथियुस को लगातार यह कहकर उत्साहित किया कि वह विरोध के कारण हताश न हो या "हमारे प्रभु की गवाही से और मुझ से जो उसका कैदी हूँ, लज्जित न हो," और उसने उसे यह चुनौती भी दी, "पर उस परमेश्वर की सामर्थ के अनुसार सुसमाचार के लिये मेरे साथ दुःख उठा" (2 तीमु. 1:8)। यह केवल शैक्षिक नहीं बल्कि व्यवहारिक परामर्श था क्योंकि पौलुस उस समय नीरो राजा के बड़े सताव के कारण बंदीगृह में था। कई मसीहियों को तब तक अखाड़ा के अंदर जानवरों ने टुकड़े-टुकड़े कर दिए थे, क्रूस पर चढ़ाए गए थे या फिर नीरो के बगीचा को रोशन करने के लिए जला दिए गए थे।[22] इस कारण तीमुथियुस का यह चिंता कि पौलुस और स्वयं उसका क्या होगा, स्वाभाविक था लेकिन प्रेरित ने अपने कनिष्ठ सहकर्मी को इन शब्दों के द्वारा उत्साहित किया, "यीशु मसीह को स्मरण रख, जो दाऊद के वंश से हुआ और मरे हुओं में से जी उठा और यह मेरे सुसमाचार के अनुसार है। जिस के लिये मैं कुकर्मी की नाई दुःख उठाता हूँ, यहां तक कि कैद भी हूँ; परन्तु परमेश्वर का वचन कैद नहीं" (2 तीमु. 2:8, 9)। तब पौलुस ने उसके आशा को दृढ़ करने के लिए प्रारंभिक शहीद के गीतों की इन पंक्तियों को उल्लेख किया

> यह बात सच है, कि यदि हम उसके साथ मर गए हैं, तो उसके साथ जीएंगे भी; यदि हम धीरज से सहते रहेंगे, तो उसके साथ राज्य भी करेंगे; यदि हम उसका इनकार करेंगे, तो वह भी हमारा इनकार करेगा; यदि हम अविश्वासी भी हों तौभी वह विश्वास योग्य बना रहता है, क्योंकि वह आप अपना इनकार नहीं कर सकता (2 तीमु. 2:11-13)।

अपने पत्र के अंत में, पौलुस ने तीमुथियुस से आग्रह किया कि वह विरोध के कारण पीछे न हट जाए; बल्कि उसने उससे यह कहा, "पर तू सब बातों में सावधान रह, दुःख उठा, सुसमाचार प्रचार का काम कर और अपनी सेवा को पूरा कर" (2 तीमु. 4:5)। पौलुस जानता था कि आशा ही एक विश्वासी को उसकी मृत्यु की घड़ी में दृढ़ रखती है। वह यह नहीं चाहता था कि तीमुथियुस का मरकुस के संग जो पुस्तकें और कपड़े जिसे उसने तीमुथियुस को लाने के लिए कहा था, उनका रोम आने से पहले यदि उसको मृत्यु दण्ड दिया जाता है तो इसके कारण वह हताश हो (2 तीमु. 4:11, 13)। उसके अंतिम शब्द यह थे:

> मैं अच्छी कुश्ती लड़ चुका हूं मैं ने अपनी दौड़ पूरी कर ली है, मैं ने विश्वास की रखवाली की है। भविष्य में मेरे लिये धर्म का वह मुकुट रखा हुआ है, जिसे प्रभु,

जो धर्मी और न्यायी है, मुझे उस दिन देगा और मुझे ही नहीं, वरन उन सब को भी, जो उसके प्रगट होने को प्रिय जानते हैं (2 तीमु. 4:7, 8)।

हमें यह नहीं पता है कि क्या तीमुथियुस, पौलुस को मृत्यु दण्ड दिए जाने से पहले उससे अंतिम बार मिल पाया था कि नहीं परंतु हम जानते हैं कि पौलुस की आशा एक लंगर के समान था जिसने न केवल उसको बल्कि तीमुथियुस को भी दृढ़ किया।

मसीही होने के कारण हम भी उसी आशा में सहभागी होते हैं। इन परमेश्वर के लोगों के समान, वे सभी जो सुसमाचार का पालन करते हैं और जो विश्वासयोग्यता के साथ परमेश्वर की इच्छा पर चलते हैं वे उस महिमामय "स्थिर नेव वाले नगर की बाट जोह सकते हैं, जिस का रचने वाला और बनाने वाला परमेश्वर है" (इब्रा. 11:10)।

टूटे हुए रिश्तों को जोड़ना (50:15-21)

टूटे हुए रिश्तों का फिर से दावा करने के लिये क्षमा ज़रुरी है। इस सच्चाई को यूसुफ़ की कहानी में देखा जा सकता है। उसके भाइयों ने उसे दासत्व में बेच दिया था और बहुत समय बीत जाने के पश्चात उनके साथ फिर से एका हो गया, जिसमें उनका पश्चाताप और उसकी क्षमा दिखाई देता है।

परिवार का मिस्र में सत्तर वर्षों तक रहने के दौरान, यूसुफ़ के भाई इस विचार से जूझते रहे कि उनके पिता के मरने के बाद यूसुफ़ उनके साथ क्या करेगा। इसका तात्पर्य है कि अपराध और अविश्वास का पुराना घाव सच में कभी भर नहीं पाया बल्कि मवाद बनकर बहने लगा। भाइयों ने प्रतीति नहीं किया कि यूसुफ़ ने उन्हें उसके प्रति ईर्ष्या या उसे दासत्व में बेच देने के अपराध से क्षमा कर दिया है। वे डर गए कि वह उनसे पलटा लेगा जब याक़ूब का सुरक्षा का हाथ उन पर से उठ जाएगा (50:15)।

हमें आश्चर्य हो सकता है कि, "इन भाइयों को क्या हो चला था?" यह निश्चित है कि यूसुफ़ उन्हें क्षमा कर चुका था; उसने चुम्बन और आँसू के साथ उन्हें गले लगाया, और घराने समेत मिस्र में आने के लिये भोजन सामग्री के साथ अन्य आवश्यक वस्तुओं को भेजकर और इसके सारी आशीषों का आनंद उठाने को कहकर उसने अपने प्रेम का प्रमाण दिया। फिर आगे, दया पूर्वक उनसे कहा कि, उन्होंने जो उसे यहाँ बेच डाला, इससे वे "न पछताए या उदास न हो," क्योंकि परमेश्वर ने उनके "प्राणों को बचाने के लिये" उसे उनके आगे भेज दिया था (45:4, 5)। वचन और कर्म से यूसुफ़ की दृष्टि में, कई वर्ष के बीत जाने पर भी अब तक उसके भाई उससे क्यों डरते हैं?

याक़ूब के मरने के पश्चात भाइयों के डर के कई संभव स्पष्टीकरण दिए जा सकते हैं। (1) कभी-कभी लोग दूसरों के मन की बात पर संदेह जताते हैं। हर किसी के लिये उन्हें क्षमा करना कठिन होता है जिन्होंने उन्हें किसी कारण से चोट पहुँचाई हो, प्रायः उनका अपना स्वभाव होता है जिससे उनके लिये दूसरों

या परमेश्वर से प्राप्त क्षमा को स्वीकार करना कठिन होता है। (2) कुछ पाप इतने भयंकर होते हैं कि लोग सोच नहीं पाते की वे क्षमा योग्य हैं। इन भाइयों ने विचार किया हो कि यूसुफ़ के विरुद्ध उनके अपराध परमेश्वर या उनके भाई की ओर से क्षमा योग्य नहीं था। (3) कुछ लोग अपने पापों का अंगीकार करने और जिनके विरुद्ध पाप किया हो उनसे नम्रता पूर्वक क्षमा माँगने में बहुत घमण्ड दिखाते हैं। यही समस्या इन भाइयों की भी हो सकती थी। यह तीसरा विकल्प यूसुफ़ के भाइयों के मामले में होने की संभावना सबसे अधिक लगती है।

कोई मनुष्य बस कल्पना कर आश्चर्य कर सकता है जब, बीस वर्ष से अधिक बीत जाने के पश्चात एक धनी और शक्तिशाली मिस्री शासक स्वयं को उनके सामने उनका भाई यूसुफ़ होने का दावा करे। उसके विरुद्ध अपराध करने पर उनकी भर्त्सना करने और कड़ा दण्ड देने के बदले वह उनके गले से लिपटकर रोया। फिर आगे, यूसुफ़ ने उनसे कहा, अपने आप पर अपराधी होने का दोष न लगाएँ, क्योंकि परमेश्वर की महान योजना उनके चारों ओर भयंकर सूखे के समय प्राणों को बचाने के लिये उनका प्रयोग करना था। अपने भाइयों के बुरी सोच के बाद भी सच्चा बने रहना, ये सब सुनने में बहुत अच्छा लगता है इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि उन्होंने माना कि यूसुफ़ का अनुग्रह एक दिखावा था। वे निश्चित थे कि वह उनके पिता के मरने तक रुका हुआ है, उसके पश्चात वह अपने सारे कष्टों का जो उनके कारण उसने सहा था उनसे पलटा लेगा।

अपने पिता को मिट्टी देने के पश्चात जब घराने के लोग कनान से मिस्र को आए, व्यक्तिगत रूप से वे अपने भाई यूसुफ़ से मिलने से डर रहे थे। इस कारण, उन्होंने एक मध्यस्थता करने वाले के द्वारा सन्देश भेजा। जबकि सन्देश का पिता की ओर से भेजे जाने का झूठा दावा करना उचित नहीं लगता है। यदि याक़ूब अपने अपराधी पुत्रों की ओर से मध्यस्थता करना चाहता था, तो उसने अवश्य ही यह बड़े ही व्यक्तिगत रूप से किया होगा। इन सबके बावजूद, मरने से पहले अपने प्रिय पुत्र की संगति का आनंद उठाने के लिये उसके पास सत्रह वर्ष थे। भाइयों ने इस सन्देश को इस आशा में बदल दिया कि यूसुफ़ का अपने पिता के प्रति प्रेम उसके भाइयों के लिये तरस उत्पन्न करेगा जिन्हें उसकी दया की ज़रूरत थी।

सन्देश में छिपा था कि यूसुफ़ को दासत्व में बेचने का जो भयंकर अपराध उन्होंने किया था उसका अंगीकार: भाइयों को बहुत वर्षों पहले कर लेना चाहिए था। इसमें उसके क्षमा के लिये याचना भी था: "अपने पिता के परमेश्वर के दासों का अपराध क्षमा कर" (50:17)। उसके भाई जानते थे की यूसुफ़ का हृदय कोमल था, और उन्हें आशा थी कि "तुम्हारे पिता [याक़ूब] का परमेश्वर" की ओर से क्षमा याचना भावनाओं के साथ व्यक्त करने पर वह मना नहीं कर पाएगा। तुम्हारे पिता के नाम पर किये गए निवेदन पर यूसुफ़ का उत्तर वही था जिसकी आशा उसके भाइयों ने की थी: अतः यूसुफ़ रो पड़ा। परन्तु, इस सन्देश से उसे बहुत गहरी चोट पहुँची; उसे अनुभव हुआ कि इतने वर्षों के पश्चात भी उन्होंने उसके वचनों का विश्वास नहीं किया या उसकी उदारता को प्रेम की सच्ची भावना

के रूप में स्वीकार नहीं किया।

जबकि यूसुफ़ को भाई जानकार गले लगाने के बदले, वे उसके सामने गिर पड़े और कहा, "देख, हम तेरे सेवक हैं" (या "दास हैं,"[23] 50:18)। इस अंतिम बार दण्डवत के साथ यूसुफ़ के पिछले भावी स्वप्नों का अन्त भी (37:5-11) पूरा हुआ। निःसंदेह, यूसुफ़ कोई दास नहीं चाहता था जो उसके पैरों पर गिरकर गिड़गिड़ाएँ और उसके लिये सेवक बनकर काम करें। बल्कि वह चाहता था कि उसके भाई उससे प्रेम करें और एक परिवार के सदस्य के रूप में उसके प्रेम को ग्रहण करें, बिना यह सोचे कि वह उनके प्रति कोई द्वेष रखता था या जो कुछ उसने उनके लिये किया उसमें उसकी कोई मंशा छिपी थी।

भाइयों का घमंड, अपराध, शंका और यूसुफ़ से उनका डर उनके रिश्ते को कमजोर और उनके भाई से सच्चे मेल-मिलाप को असंभव कर चुका था। ऐसे चरित्र और विचारों ने बहुत से परिवारों और कलीसियाओं को नष्ट कर दिया है। परमेश्वर के लोग होने के कारण आज, हमें प्रभु यीशु के भाई, याक़ूब के आग्रह पर ध्यान देना चाहिए जिसने कहा "इसलिये तुम आपस में एक दूसरे के सामने अपने-अपने पापों को मान लो, और एक दूसरे के लिये प्रार्थना करो, जिससे चंगे हो जाओ" (याक़ूब 5:16)। यह वचन रोगी मनुष्य की शारीरिक चंगाई के लिये था, परन्तु यही सिद्धांत एक व्यक्ति विशेष, परिवार और परमेश्वर की भीड़ जो भावनात्मक दर्द से गुज़र रहा हो लिये भी लागू होता है। पश्चाताप, पाप अंगीकार और पूर्ण क्षमा से सच्चा मेल-मिलाप उन लोगों के बीच ज़रुरी है जो आत्मिक रूप से बीमार हैं। शंका, डर और कठोर मन जब जीवन का मार्ग बन जाए, तो परिणाम उसमें सम्मिलित हरेक के लिये विडम्बना बन जाती है।

फिर, यूसुफ़ का उदाहरण पौलुस के मन में सबसे पहले उस आया जब उसने इफिसियों की कलीसिया, परमेश्वर के आत्मिक घराने के लोगों, से आग्रह किया "एक दूसरे पर कृपालु और करुणामय हो, और जैसे परमेश्वर ने मसीह में तुम्हारे अपराध क्षमा किए, वैसे ही तुम भी एक दूसरे के अपराध क्षमा करो" (इफि. 4:32)। परमेश्वर अपराध के बोझ से दबे हुए दास नहीं चाहता जो उसके प्रेम और क्षमा की प्राप्ति के लिये कठिन परिश्रम करे; वह लोगों को अपने मन की भलाई के अनुसार आशीष देना और उनके पापों के बोझ से मुक्त करना चाहता है। पूरे संसार के लिये अपने महान प्रेम के कारण वह लोगों पर अनुग्रह करता है (यूहन्ना 3:16)।

जैसे परमेश्वर ने मसीह में हमें क्षमा किया है, हमें दूसरों को उसी रीति क्षमा करना चाहिए (इफि. 4:32)। उसका वायदा है कि "हमारे अधर्म के कामों को फिर कभी स्मरण नहीं करेगा" (इब्रानियों 8:12; 10:17) - अर्थात् हमारे पापों को हमारे विरुद्ध नहीं गिनेगा। परन्तु, मनुष्य के लिये ऐसा कर पाना सहज नहीं है। हमें संपूर्ण ह्रदय से क्षमा करना है और दूसरों के विरुद्ध डाह करके परीक्षा में पड़ने से स्वयं को रोकना जरुरी है।

यूसुफ़ और उसके भाइयों की कहानी पश्चाताप, क्षमा और सच्चे मेल-मिलाप की मूलभूत ज़रुरत को दर्शाती है। जब मिस्र में यूसुफ़ ने स्वयं को अपने भाइयों के

सामने प्रगट किया तब उसकी क्षमा पक्की थी (45:4-8); परन्तु, यहाँ पर उनकी ओर से सच्चा पश्चाताप या अपने पापों का अंगीकार देखने को नहीं मिलता है।

बाहरी दिखावे को छोड़, यूसुफ़ और भाइयों के बीच कोई वास्तविक संगति नहीं हो सकती थी, जब तक वे अपने-अपने मन का बोझ हल्का न करें और उसके सामने अपने पापों का अंगीकार न करें। और अंततः जब उन्होंने उससे क्षमा की याचना की, यूसुफ़ रो पड़ा और यह कहते हुए कि उन्हें शांति दी कि, यह उसका काम नहीं की परमेश्वर का स्थान ले और उन्हें उनके पापों के लिये क्षमा करे। यद्यपि उसके भाइयों ने बुराई का विचार किया था, पर यूसुफ़ ने कहा, परमेश्वर ने उसी बात पर भलाई का विचार किया ताकि बहुतों के प्राण बचें रहे (50:19, 20)। यूसुफ़ ने अपने अपराधी भाइयों पर तरस दिखाया और उन्हें अपने प्रेम का आश्वासन दिया। ऐसा करके वह यीशु का मार्ग तैयार करने वाला बन गया, जो पापियों पर दया कर उन्हें ग्रहण करने वाला के रूप में स्मरण किया जाता है। यीशु ने न केवल पौलुस (शाऊल) को क्षमा किया, बल्कि उसने उसे प्रेरित के रूप में "सेवा के काम" (διακονία, *डिआकोनिया;* "सेवकाई") के लिये पूरे विश्वास के साथ बुलाया। मसीह के लिये पौलुस कि सेवकाई उनके पूर्ण मेल-मिलाप को दर्शाता है। पौलुस अपनी बुलाहट के प्रति विश्वासयोग्य था। प्रेरित के रूप में कई वर्षों तक कार्य करते हुए बीते हुए अनुभवों को सोचते हुए अपना आभार व्यक्त करते हुए कहता है कि:

> मैं मसीह यीशु हमारे प्रभु का धन्यवाद करता हूँ, जिसने मुझे सामर्थ्य दी है, कि उसने मुझे विश्वासयोग्य समझकर अपनी सेवा के लिये मुझे ठहराया, मैं तो पहले निंदा करनेवाला, और सताने वाला और अंधेर करनेवाला था। तौभी मुझ पर दया हुई क्योंकि मैं ने अविश्वास की दशा में बिन समझे बुझे ये काम किये थे और हमारे प्रभु का अनुग्रह उस विश्वास और प्रेम के साथ जो मसीह यीशु में बहुतायत से हुआ है। यह बात सच और हर प्रकार से मानने के योग्य है कि मसीह यीशु पापियों का उद्धार करने के लिये जगत में आया, जिनमें सबसे बड़ा मैं हूँ। पर मुझपर इसलिये दया हुई कि मुझ सबसे बड़े पापी में यीशु मसीह पूरी सहनशीलता दिखाए, कि जो लोग उस पर अनन्त जीवन के लिये विश्वास करेंगे उनके लिये मैं एक आदर्श बनूँ (1 तीमु. 1:12-16)।

आभार व्यक्त करने का पौलुस का तात्पर्य था कि "यदि मसीह यीशु अपनी दया मुझ - पापियों में सबसे बड़ा पर दिखाए - और मेरे सारे पापों को क्षमा करे, तो अनन्त जीवन की आशा उन सभी लोगों के लिये खुली है जो उस पर विश्वास करें और उसकी आज्ञा पर चलें" (देखें इब्रा. 5:9)।

समाप्ति नोट्स

[1]केनेथ ए. मैथ्यूस, *जेनेसिस 11:27-50:26*, द न्यू अमेरिकन कमेंटरी, वोल. 1B (नैशविल: ब्रोडमन & होलमन पब्लिशर्स, 2005), 917. [2]ऐसा प्रतीत होता है की विलाप करना चालीस दिनों के सुगंध द्रव्य लगाने के दौरान ही शुरू हो जाता था और वह अतिरिक्त तीस दिनों तक

चलता रहता था। बाद वाली अवधि हारुन (गिनती 20:29) और मूसा (व्यव. 34:8) दोनों के लिए किए तीस दिन के विलाप से मेल खाती है। [3]रिचर्ड एन. जोन्स, "एम्बामिंग," इन *द एंकर बाइबल डिक्शनरी*, एड. डेविड नोएल फ्रीडमन (न्यू यॉर्क: डबलडे, 1992), 2:491-92. [4]एक समान स्थिति ऐस्तेर 4:1, 2 में देखने को मिलती है जब मोर्दकै फारस के शूशन नगर के राजभवन के फाटक में प्रवेश नहीं कर पाया था, क्योंकि वह विलाप कर रहा था (टाट पहने और राख डाले हुए)। [5]अपनी मृत्यु शय्या पर याकूब ने परिवार के उन सदस्यों का उल्लेख किया जिन्हें मकपेला की गुफ़ा में दफ़नाया गया था: अब्राहम, सारा, इसहाक, रिबका और लिआ (49:31)। क्योंकि राहेल की मृत्यु बेतेल और बेथलहम के मध्य में कही हुई थी उसे पारिवारिक कब्र में नहीं दफ़नाया गया था (35:16-20)। इस बाइबलीय विवरण का आशय यह है कि याकूब ही अब्राहम का एक और वंशज था जिसे वहां दफ़नाया जाना था (50:7-14)। [6]सदियों के बाद, फ़िरौन के रथों और सवारों को इस्राएल के पुत्रों के विरुद्ध भेजा जाने वाला था जब वे मिस्र छोड़ कर गए थे (निर्गमन 14:9, 17, 18, 23, 26, 28)। [7]जॉन टी. विल्लिस, *जेनेसिस*, द लिविंग वर्ड कमेंटरी (ऑस्टिन, टेक्सस.: स्वीट पब्लिशिंग कंपनी, 1979), 459. [8]फ्रांसिस ब्राउन, एस. आर. ड्राईवर, चार्ल्स ए. ब्रिग्स, *अ हिब्रू एंड इंग्लिश लेक्सिकन ऑफ़ द ओल्ड टेस्टमेंट* (ऑक्सफ़ोर्ड: क्लेरेंडॉन प्रेस, 1962), 31. [9]गॉर्डन जे. वेन्हम ने परम्परागत ठिकाने का सुझाव यरिहो के पास एक स्थान का दिया परन्तु यरदन नदी की पूर्वी दिशा में अन्य स्थान का विकल्प चुन लिया। (गॉर्डन जे. वेन्हम, *जेनेसिस 16-50*, वर्ड बिब्लिकल कमेंटरी, वोल. 2 [डलास: वर्ड बुक्स, 1994], 489.) मैथ्यूस ने तेल अल अज्जुल का सुझाव सबसे तर्कशील चुनाव के रूप में दिया क्योंकि यह मिस्र से कनान देश के सबसे छोटे मार्ग, पलिश्ति देश की समतल भूमि पर, स्थित है (निर्गमन 13:17)। (मैथ्यूस, 919.) [10]साइमन कोहेन, "आताद," इन *द इंटरप्रिटर्स डिक्शनरी ऑफ़ द बाइबल*, एड. जॉर्ज आर्थर बट्रिक (नैशविल: एबिंगटन प्रेस, 1962), 1:305.

[11]गैरी एच. ऑलर, "आताद," इन *द एंकर बाइबल डिक्शनरी*, 1:508. [12]NIV (अंग्रेज़ी) में "यरदन के पास" है जो अजीब लगता है क्योंकि עֵבֶר *(एबर)* का अर्थ "पार" या "परे" होता है। (ब्राउन, ड्राईवर, एंड ब्रिग्स, 719.) [13]यरदन नदी मृत में समां जाती है करीब समुद्र तल से 1300 फीट के नीचे, और संभवतया यूसुफ़ के परिजनों ने समुद्र के उत्तर में कुछ दूरी पर नदी पार की होगी। [14]विक्टर पी. हैमिलटन ने टिप्पणी की कि उत्पत्ति 50:11 "आताद का खलिहान" के निवासियों का उल्लेख "कनानियों" के रूप में करता है और पुराने नियन में किसी अन्य जगह कनानियों के यरदन नदी के पूर्व में रहने वालों के रूप में वर्णन नहीं है। इसीलिए यूसुफ़ और उसकी मण्डली का सात दिन यरदन नदी के पश्चिन ओर विलाप करने वाली बहस निराधार है। (विक्टर पी. हैमिलटन, *द बुक ऑफ़ जेनेसिस: चैप्टर 18-50*, द न्यू इंटरनेशनल कमेंटरी ऑन द ओल्ड टेस्टमेंट [ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन विलियम बी. अड्र्समन पब्लिशिंग कंपनी, 1995], 697.) [15]यूसुफ़ को उन भाइयों के अनुरोध में बिन्यामीन को शामिल नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि वह छोटा था और अपने पिता के साथ घर पर था जब उन दस भाइयों ने याकूब के चहेते बेटे को बन्धुवाई में बेच दिया था। [16]हैमिलटन, 703. [17]याकूब ने ऐसा ही प्रश्न राहेल से पूछा था, जिसने अपने बांझपन के लिए उस पर दोष लगाया था (30:1, 2)। [18]सदियों बाद, बाबुल की बंधुआई में यहूदियों ने यहेजकेल के संदेश से परमेश्वर के न टलने वाले उद्देश्य को समझा। उसके संदेश ने उनके जीवन में नये जीवन तथा नई आशा का संचार किया (आत्मिक पुनरुत्थान) जिसने उन्हें इस्राएल की धरती पर लौटकर नई जीवन प्रारंभ करने का बल प्रदान किया (यहेज. 37:9-14)। [19]जब यीशु ने अपने शिष्यों को सारे जगत में सुसमाचार प्रचार करने के लिए भेजा तो उसने भी परमेश्वर के वक्तव्य, जो उसने याकूब को बोला था, दोहराया "सदैव मैं तुम्हारे साथ हूँ" (मत्ती 28:20)। [20]अगस्तीन, "सरमन 382: सरमन आन द बर्थडे ओफ़ सैंट स्टीफन द फर्स्ट मार्टर," में *सरमन 341-400*, द वर्क्स आफ सैंट अगस्टीनः अ ट्रांसलेशन फॉर द 21 सेंचुरी, पीटी. 3, वॉल्यूम 10, अनुवाद एडमंड हिल, प्रकाशकः जॉन ई. रोटेल (हाईड पार्क, न्यू. यॉर्क.: न्यू सीटी प्रेस, 1995), 377.

[21]दानियेल 7:13, 14, यीशु का स्वर्ग से धरती पर आगमन्, जैसे कि कुछ लोगों का अनुमान है कि उसका धरती पर साम्राज्य स्थापित करने के बारे में नहीं बताता है बल्कि यह यीशु (मनुष्य का पुत्र) का परमेश्वर के सिंहासन ("अति प्राचीन"; दानियेल 7:9, 10) के सम्मुख आरोहण "प्रभुता, महिमा और राज्य, कि देश-देश और जाति-जाति के लोग और भिन्न-भिन्न भाषा बोलने वाले सब उसके आधीन हों"; प्राप्त करने के लिए था (दानियेल 7:13, 14)। उसी प्रकार, पतरस ने भी यीशु का परमेश्वर के दाहिने हाथ की ओर आरोहण, दाऊद के शाही राजगद्दी पर प्रभु और मसीह के रूप में राज्य के प्रारंभ दर्शाता है। पेन्तेकुस्त के दिन उस सुसमाचार के प्रत्युत्तर में तीन हजार लोगों का मसीह का आज्ञाकारी होना था (प्रेरितों. 2:29-41)। [22]टेसिटस *अनल्स* 15.44. [23]इब्रानी शब्द עֶבֶד *(एबेद)* में इसका अर्थ या तो "सेवक" या "दास" होता है। यहाँ पर, इसका अर्थ संभवतः दास होना चाहिए, क्योंकि यूसुफ़ के भाइयों ने उसे दासत्व में बेच दिया था।